Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-लोक

७५ नये पैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर पढ़िए

ध्वनि ३
—अवधबिहारी लाल

भारत का जादुई पौधा सर्पगंधा ७
—प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव

उड़न सिद्धान्त १२
—राजेन्द्रकुमार

खेल-खिलवाड़ भरा पौपस १६
—त्रिलोकीनाथ शर्मा

दैत्याकार हल २०
—ब्रजेन्द्रप्रसाद पालीवाल

सोना सोना ही है २४
—रमेशचन्द्र कपूर

अन्तरिक्ष किरणों का निर्माण २६
—डा. अयोध्याप्रसाद शर्मा

सेन्टाइगो रेमन केजेल ३५
—कुमारी रेखा सरीन

रंगीन प्रकाश की अनुभूति ४०
—सुरेन्द्रकुमार सक्सेना

प्राणियों में प्रणय-लीला ४४
—जगदीशप्रसाद अग्रवाल

हमारी बिजली ५१
—सुशीलकुमार

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियाँ ३६
विचित्र संसार ५६
विज्ञान क्लब ५६
आपके प्रश्न ६२
इनाम लो ६३
तुम्हारी कलम से ६४

अपनी बात

५वें अन्तरराष्ट्रीय युवक विज्ञान के १५ दिवसीय अधिवेशन के अवसर पर संसार के विभिन्न भागों से आये हुए ४५० से भी अधिक युवा वैज्ञानिकों ने भाग लिया। इसके संरक्षक एवं उद्घाटनकर्ता ड्यूक आफ एडिनबर्ग थे। रीजेन्ट स्ट्रीट पॉलीटेकनीक, लन्दन के इंजीनियरिंग के २३ वर्षीय भारतीय छात्र श्री वी. सी. थामस ने २६ देशों का नेतृत्व करते हुए मंच पर भारत का राष्ट्रीय ध्वज फहराया।

इस अधिवेशन के दो मुख्य लक्ष्य थे—प्रथम, संसार के विभिन्न राष्ट्रों के वैज्ञानिक छात्रों के मध्य विचारों का आदान-प्रदान और दूसरा, उनके मध्य मैत्री और सद्भावना का प्रसार।

उद्घाटन-वक्तव्य में ड्यूक ने अपना मत व्यक्त करते हुए कहा कि आज के विज्ञान का प्रभाव स्वास्थ्य तथा चिकित्सा, संवाद तथा परिवहन और कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्र में हुई प्रगति से स्पष्ट है। उन्होंने यह भी कहा कि ब्रिटिश विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में विभिन्न राष्ट्रों के १५००० से भी अधिक छात्रों को ब्रिटेन प्रत्येक सम्भव सहयोग और सुविधा दे रहा है।

विज्ञान-लोक की सम्मति में यह एक अति शुभ संकेत है और ब्रिटेन में अध्ययन-रत प्रत्येक भारतीय छात्र से ऐसी ही प्रतिष्ठा-वृद्धि की आशा रखता है।

वर्ष ४ अंक ८

मूल्य
एक प्रति : ७५ नये पैसे
वार्षिक : ६ रुपये

सम्पादक : शंकर मेहरा
प्रकाशक : श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

ध्वनि

अवधबिहारी लाल

ध्वनि कोई ठोस वस्तु नहीं जो पकड़ में आ सके और कोई चित्र भी नहीं जो देखा जा सके । जब-जब हमारे कानों पर स्वरलहरी टकराती है, हमें सुनने की अनुभूति होती है । समझ लीजिए, कहीं निकट ही में लोहार का घन बज उठा । तब निहाई पर चोट करते समय घन ने अपनी शक्ति का कुछ भाग चारों ओर के वायुमण्डल को भी दे दिया । फलस्वरूप ठीक वैसी ही तरंगें वायु में उत्पन्न हो गयीं जैसी शान्त पानी में ढेला फेंकने पर हो जाती हैं फर्क इतना ही है कि पानी की लहरें क्षैतिज अवस्था में गोल घेरें बनाती, मिटाती और फिर बनाती जाती हैं और ध्वनि-लहरें वायुमण्डल में प्रकम्पित वस्तु के चारों ओर गुब्बारे की भाँति बनती, बढ़ती और मिटती जाती हैं । दूसरे उदाहरण-स्वरूप एक स्वरित्र (tuning fork) लीजिए और उसकी एक भुजा को टंकार दीजिए । जब तक वह भुजा प्रकम्पन करती रहेगी, वायु में तरंगें उठती रहेंगी । वे ही तरंगें जब तक हमारे कान से टकराती रहेंगी, हम उसकी स्वरलहरी सुनते रहेंगे ।

ध्वनि की ये लहरें चित्र रूप में भी देखी जा सकती हैं । इसके लिए स्वरित्र की एक भुजा पर एक पतला ढीला तार खड़ी अवस्था में बाँध दीजिए । अब भुजा पर टंकार करके एक ओर काजल पोती हुई शीशे की तख्ती को उस तार से छुआते ही छुआते एक निश्चित गति से सरकाते रहिए । आप देखेंगे कि एक सुनिश्चित डिजाइनयुक्त लहरियेदार चित्र बन गया है । वही हमारा तरंग-चित्र है । किसी पात्र का यदि कम्पन नहीं तो तरंगें नहीं ।

भाँति-भाँति की ध्वनियाँ

ध्वनियों की विविधता का हमारा ज्ञान अत्यन्त सीमित है । हमारी श्रवण-क्षमता अति सीमित होने के कारण अनेक प्रकार की ध्वनियाँ तो हम सुन ही नहीं पाते । पवन की सरसराहट, पत्तों की खड़खड़ाहट, बादलों की गड़गड़ाहट, पंखों की फरफराहट, मच्छरों की भनभनाहट, गीतों की गुनगुनाहट, घोड़े की हिनहिनाहट, नदी की कलकल, सिंह की गर्जना, हाथी की चिग्घाड़, तोप का धमाका, बम का धड़ाका, सितार का स्वर, तबले की थाप, मुरली की तान,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

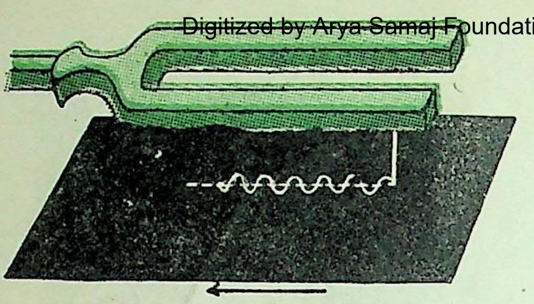

स्वरित्र द्वारा ध्वनि का रेखांकन

घुड़सवार की आहट, शंखनाद, घंटारव, तथा जनसमुदाय का शोरगुल और हो-हल्ला आदि कुछ ध्वनियाँ हैं जिन्हें हमने सम्बन्धित ध्वनिकर्ताओं से उनकी पहचान करने के लिए वर्गीकृत कर रखा है। हम जानते हैं कि इनमें कई ध्वनियाँ कोमल हैं, तो कुछेक कर्कश भी, कई कर्णप्रिय हैं तो कई कर्णकटु भी। इनके उत्पादित होने, तरंगित होने तथा प्रसारित होने के आधारभूत प्रकार समान ही हैं। इन्हीं में निम्नतम तथा उच्चतम आवृत्तियों (frequencies) की ध्वनियाँ होती हैं। साधारणतया मनुष्य प्रति सेकण्ड निम्नतम ३० तथा उच्चतम ४०००० आवृत्तियों की ध्वनियाँ सुन सकता है। कुछेक प्राणी विशेषतः कुत्ता और अपवादस्वरूप चमगादड़ इतनी अधिक आवृत्तियों की ध्वनियाँ सुन सकते हैं जो मनुष्य के लिए सुनना सम्भव ही नहीं।

ध्वनि को माध्यम चाहिए

आवागमन के लिए ध्वनि केवल वायु पर ही निर्भर नहीं। वायु तो इसके लिए तृतीय श्रेणी का माध्यम है। पानी में अधिक तथा धातुओं एवं ठोस पदार्थों में इसका आवागमन सरलतम रहता है। वायु में इसकी गति केवल ११०० फुट प्रति सेकण्ड अर्थात् पाँच सेकण्ड प्रति मील की रहती है। यही ध्वनि पानी में ४६०० फुट प्रति सेकण्ड अर्थात् लगभग पाँच गुने वेग से और ठोस माध्यम में १६००० फुट प्रति सेकण्ड अर्थात् १५ गुने वेग से गमन करती है। यदि हम ३०५ मील दूर से अपने मित्र को पुकारें तो सिद्धान्ततः हमारा स्वर उसके कानों में ३० मिनट में टकराना चाहिए। इसके विपरीत, यदि टेलीग्राफ की संकेत-भाषा में अपने संवाद को रेल की पटरी पर ठकठुकाएँ तो वह संवाद उतनी ही दूरी केवल दो मिनट में तय कर लेगा। इसी आधार पर पूर्वकाल में शत्रु-सवारों की टोह धरती पर कान लगाकर ली जाती थी, क्योंकि उनके घोड़ों की टाप मीलों दूर से इसी प्रकार प्रकम्पनों द्वारा ज्ञात कर ली जाती थी।

माध्यम के ताप से भी ध्वनि की गति स्पष्टतः प्रभावित होती है। निम्न ताप पर गति मन्द पड़ जाती है। सागर-सतह पर ४४०°F ताप हो तो ध्वनि का वेग ११०२ तथा ३२°F हो तो १०८७ फुट प्रति सेकण्ड रहेगा। उससे ऊपर उठकर १०००० फुट की ऊँचाई पर और भी गिरे हुए ताप में यह गति १०५० फुट ही रह जाएगी। इसलिए ध्वनि-वेग के समकक्ष तथा उससे भी तीव्र उड़ने वाले विमानों की प्रायोगिक उड़ानें तप्त वायुमण्डल में ही की जाती हैं, क्योंकि बढ़े हुए ताप में ही ध्वनि का वेग अधिकतम रहता है।

निर्वात माध्यम में ध्वनि का गमन नहीं होता। इसे समझने के लिए शीशे के एक

यह शिकारी धरती पर कान लगाकर मीलों दूर से आते हुए सवार की आहट ले लेता है

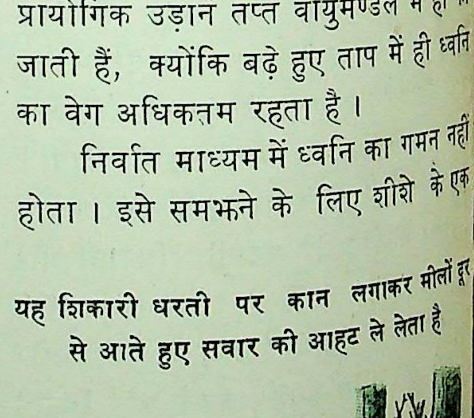

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय गुरुकुल

बन्द बर्तन में बजती हुई अलार्म घड़ी उतार दीजिए। ढक्कन बन्द करने पर आप देखेंगे कि ध्वनि अत्यन्त मन्द पड़ गयी है। उसी बर्तन से पम्प द्वारा समूची हवा निकालकर देखिए तो केवल अलार्म चलती दिखाई देगी किन्तु सुनाई बिलकुल नहीं पड़ेगा। इसका एकमात्र कारण माध्यम का अभाव है अर्थात् प्रकम्पित होने के लिए वायु तो उसमें रही ही नहीं जिससे उत्पन्न वायु तरंगें हमारे कानों से टकरातीं।

क्या शोर-गुल, क्या संगीत

शोर-गुल और संगीत में निश्चित अन्तर है। संगीत के लिए मनुष्य स्वर को शास्त्रीय गणना के अनुसार लयबद्ध करता है तब कहीं वह स्वरलहरी हमारे कानों से टकराती है। शोर-गुल बगैर किसी साज-सँवार की प्रतीक्षा किये, हम चाहें-न-चाहें, हमें सुनाई देता ही रहता है। फिर भी ऐसी अनियंत्रित ध्वनियाँ कभी-कभी किसी-किसी के लिए आकर्षक भी सिद्ध होती हैं—जैसे, मोर के लिए मेघ-गर्जन, सैनिक के लिए तोप-गर्जन और अपने प्रियजन की प्रतीक्षा करने वाले के लिए धड़धड़ाकर आती हुई ट्रेन।

आवाज लौटती है

प्रकाश-किरणों की भाँति ध्वनि भी टकराकर परावर्तित होती है। यदि हम किसी पहाड़ी की ओर मुँह करके पुकारें तो दूसरे ही क्षण हमारी आवाज लौटकर हमारे कानों से आ टकराएगी। स्पष्ट प्रतिध्वनि सुनने के लिए किसी भी दीवार अथवा पहाड़ी का ६० फुट दूर होना आवश्यक है। इंग्लैण्ड के अनेक चर्च ऐसे हैं जिनके निर्माण में ध्वनि-परावर्तन का विशेष ध्यान रखा गया है। उनकी छतें और मेहराबें इस प्रकार बनी हैं कि एक मेहराब से दूसरी मेहराब तय करते-करते ध्वनि संयुक्त होकर

प्रसिद्ध वैज्ञानिक, राबर्ट बायल द्वारा सत्रहवीं शताब्दी में बनाया हुआ यह यन्त्र सिद्ध करता है कि निर्वात माध्यम में ध्वनि गमन नहीं कर सकती

काफी देर तक गूँजती रहती है। ताजमहल के बड़े गुम्बद में भी ध्वनि परावर्तन का रोचक अनुभव किया जा सकता है। आयरलैण्ड में तो पहाड़ियों से घिरे कुछेक सरोवर ऐसे हैं जहाँ एक ही ध्वनि सौ-सौ बार परावर्तित हो लेती है।

गूँज—एक साज भी, एक झंझट भी

यह ध्वनि-परावर्तन, जिसे हम गूँज भी कहेंगे, कहीं साज का काम देती है और कहीं परेशानी खड़ी कर देती है। एक ही भवन में जब यांत्रिक संगीत चल रहा हो तब तो गूंज स्वयं एक साज बनकर उसका आकर्षण बढ़ा देती है और उसी में जब मौखिक संगीत, भाषण अथवा गीत-पाठ चल रहा हो तो शब्दों का ऐसा झमेला खड़ा हो जाता है कि सुननेवाले की कुछ भी समझ में नहीं आता। इसी प्रकार एक खाली हाल में गूँज के कारण दो व्यक्ति आपस में भी बातचीत नहीं कर पाते और उसी में जब फर्नीचर की सजावट कर दी जाती है तब सारी गूंज अवशोषित होकर नक्शा ही बदल देती है। इसीलिए चर्चों तथा बड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हालों में गूँज से बचने के लिए बड़े-बड़े पर्दे लटकाये जाते हैं।

नूतन ध्वनि-विज्ञान

यह नूतन ध्वनि-विज्ञान (acoustics) आजकल थियेटर हालों के निर्माण में अत्यावश्यक हो गया है। सिनेमा-हाल की स्क्रीनवाली दीवार नतोदर लेन्स की भाँति घुमावदार होती है ताकि ध्वनि उस पर केन्द्रित होने के पश्चात् ही हाल में प्रक्षेपित हो। साथ ही, छतें तथा दीवारें बनाने में ध्वनि-अवशोषक टाइल्स, गद्दियाँ आदि लगायी जाती हैं। आधुनिक रेस्तराँ भी इस खूबी से ध्वनि-अवरोधक बनाये जाते हैं कि ग्लास-प्यालों की खड़खड़ाहट तथा सड़क का शोरगुल सर्वथा दब जाए।

इस दिशा में लन्दन का रायल फेस्टिवल हाल अनुपम है। उस हाल में कुल जितने व्यक्ति बैठ सकते हैं उनके द्वारा ध्वनि का अवशोषण कितना होगा, इसका पूरा ध्यान रखा गया है। सारी खूबी उसकी सीटों में है। जब कोई व्यक्ति प्रोग्राम के बीच से उठकर बाहर जाएगा तो स्पष्ट है कि एक व्यक्ति का ध्वनि-अवशोषण कम हो जाएगा। इसके लिए ज्योंही वह उठ खड़ा होगा, उसकी सीट का निचला भाग उलटकर ऊपर आ जाएगा। उसी भाग में ध्वनि अवशोषक पदार्थ इस हिसाब से भरे रहते हैं कि वे एक व्यक्ति के योग्य ध्वनि का अवशोषण करते रहें। उस सीट पर पुनः किसी के आने पर ध्वनि-अवशोषक भाग नीचे चला जाता है और काफी काम व्यक्ति का शरीर पूरा कर देता है। यों उस हाल का ध्वनि-अवशोषण-संतुलन नहीं बिगड़ने पाता।

ध्वनि-अवशोषक पदार्थों द्वारा निर्मित ये विशिष्ट प्रकार की दीवारें कक्ष को सर्वथा शून्य रखती हैं

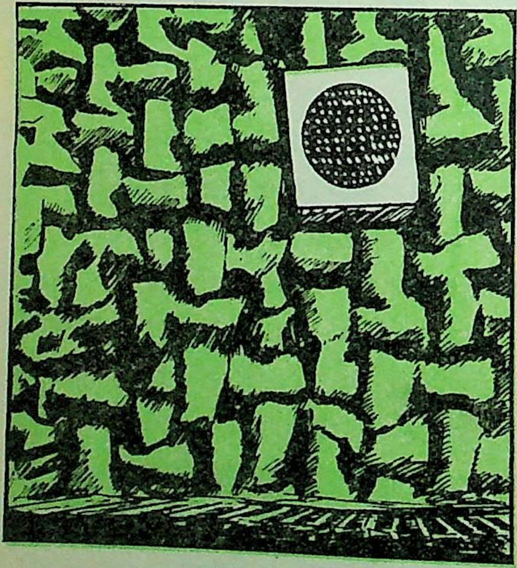

चिकित्सा में ध्वनि-विज्ञान

इस क्षेत्र में इसे मनोध्वनि-विज्ञान (psychoacoustics) का नाम दिया गया है। इसके द्वारा यह ज्ञात किया जाता है कि विभिन्न ध्वनियों का मानव-मन पर क्या प्रभाव पड़ता है। बहुत देर तक शोर-गुल के मध्य रहने (मशीनों की घरघराहट में ८ घण्टे काम करने वाले) के फलस्वरूप मनुष्य की कार्यक्षमता तथा मनोयोग की शक्ति क्षीण होती रहती है और वह व्यक्ति क्रमशः निरुत्साहित, चिड़चिड़ा और क्षमताहीन होता जाता है। लगभग ध्वनि-शून्य वातावरण में लम्बे अर्से तक लगातार काम करने वाला व्यक्ति स्वयं को संसार से अलग-सा अनुभव करता है। ●

गंधक का तेजाब पुड़िया में !

कनाडा की हेल्मर केमिकल कम्पनी द्वारा तैयार किया गया यह नुस्खा गंधक के तेजाब को सूखे पाउडर के रूप में पुड़िया में ही पेश करता है। इसमें सान्द्र गंधकाम्ल विशेष प्रकार से तैयार किये गये कैल्सियम सिलीकेट पाउडर में मिलाया जाता है जिसे वह पाउडर भली प्रकार सोख लेता है। इस पाउडर में ८०% तेजाब विद्यमान रहता है। इससे इसे लाने-ले जाने में अत्यधिक सुविधा रहती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत का जादुई पौधा सर्पगंधा

प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव

प्राचीन काल की बात है। भारत में हिमालय पर्वत के नीचे के स्थानों में एक विशेष प्रकार का पौधा पाया जाता था। वहाँ के निवासी इस पौधे को सर्पगंधा (snake root plant) के नाम से पुकारते थे। उनका विश्वास था कि इस पौधे में कुछ जादू होता है। कभी-कभी तो इसके जादुई गुणों के कारण उस समय लोग इस पौधे का प्रयोग अनिद्रा, पागलपन और अंधेपन तक को दूर करने में करते थे। लगभग ३,००० वर्षों तक यह पौधा एक रहस्य बना रहा और इसके विषय में कोई विशेष जानकारी न हो सकी।

१६वीं शताब्दी में जर्मनी के श्री राउल्फ (Rauwalf) नामक चिकित्सक ने चिकित्सा के ज्ञान की खोज के लिए पूर्व दिशा की ओर प्रस्थान किया। कुछ लोगों के मतानुसार श्री राउल्फ इसी समय सर्पगंधा के सम्पर्क में आये। किन्तु यह बात शंकापूर्ण है कि श्री राउल्फ ने स्वयं इस पौधे को देखा। जो भी बात रही हो, किन्तु यह सत्य है कि जब कुछ वर्षों बाद यह पौधा यूरोप पहुँचा तो श्री राउल्फ के सम्मान में इस पौधे का नाम राउल्फिया रखा गया। शीघ्र ही राउल्फिया की कहानी सारे यूरोप में फैल गयी। किन्तु वैज्ञानिकों को फिर भी इसके जादुई गुणों के विषय में अविश्वास था। इस प्रकार ३०० वर्ष और व्यतीत हो गये किन्तु यह पौधा रहस्य ही बना रहा। अन्त में १९३१ में बम्बई के एक प्रसिद्ध डा. रुस्तम जल वकील ने ब्रिटिश हार्ट जरनल में एक बहुत ही सनसनी खेज लेख प्रकाशित करवाया। डाक्टर रुस्तम जल वकील के अनुसार सर्पगंधा द्वारा बारबिट्युरेट्स (barbiturates) की अपेक्षा ५० रोगियों में रक्त-चाप कम हो गया। इस समाचार के उपरान्त संयुक्त राज्य अमरीका के डाक्टर राबर्ट विलकिन्स ने सर्पगंधा से ओषधि तैयार करने का निश्चय किया। इसके पश्चात् ही पश्चिमी राष्ट्रों में सर्पगंधा द्वारा रोगों के उपचार का मार्ग खुल गया।

राउल्फिया की लगभग ५० जातियाँ पायी गयी हैं, किन्तु भारत में ओषधि के काम आने वाली केवल दो जातियाँ हैं :

(१) राउल्फिया सर्पेन्टाइना (*Rauwalfia serpentina*) और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) राउल्फिया कैनेसेन्स (*Rauwalfia canescens*)।

इसमें राउल्फिया सर्पेन्टाइना विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

राउल्फिया सर्पेन्टाइना

यह पौधा छोटा, केशहीन, ऊपर की तरफ सीधा उगने वाला एक गुल्म या झाड़ी है। इसकी छाल पीले रंग की होती है। पत्तियाँ डंठल के चारों तरफ घुमावदार गुच्छे या आवर्त में होती हैं। पत्तियाँ साधारणतया ३-७ इंच लम्बी और १-२ इंच चौड़ी होती हैं। पत्ती का आकार भाले के फल जैसा या प्रासवत होता है। ऊपरी सिरा नुकीला

सर्पगंधा का छोटा पौधा

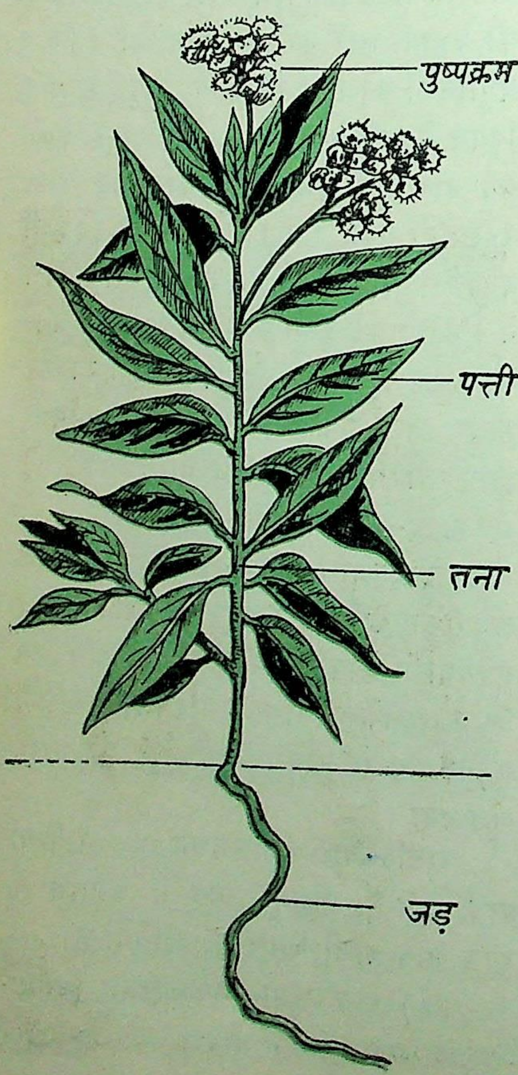

होता है और नीचे पतला होता जाता है। पत्ती पर्ण दण्ड या पत्ती के डंठल में समाप्त होती है। पत्ती पतली, हरी और नीचे की ओर पीली होती है। पुष्प सफेद या हलके गुलाबी होते हैं और साधारणतया नवम्बर से दिसम्बर तक खिलते पाये गये हैं। पुष्पक्रम कोरिम्बोस साइम (*Corymbose cyme*) होता है। पुष्पक्रम या तो किसी शाखा या उपशाखा के बगल से निकलते हैं या शाखा या उपशाखा के ऊपरी भाग पुष्पक्रम में समाप्त होते हैं। पुष्पक्रम-दण्ड काफी मजबूत होता है और २/५ इंच तक लम्बा होता है। पुष्पवृन्त और बाह्य दल पुंज लाल रंग का होता है। निपत्र छोटा और प्रासवत होता है। बाह्य दल पुंज की पिण्डिका १/१० इंच लम्बी और प्रासवत होती है। दल पुंज लगभग १/२ इंच लम्बा होता है। दल पुंज से बनी नलिका पतली और मध्य से जरा ऊपर थोड़ी मुड़ी होती है। नलिका की अपेक्षा दल-पिण्डिका बहुत छोटी होती है। पुंकेसर नली के भीतर होता है और नलिका के मध्य या मध्य से थोड़ा ऊपर जुड़ा होता है। परागकोष छोटा, ऊपर की तरफ पतला और वर्तिकाग्र से मुक्त होता है। पुष्पकोष बड़ा और प्याले के आकार का होता है। फल का व्यास १/४ इंच होता है। एक पुष्पदण्ड से लगे फल की संख्या एक या दो हो सकती है। ये लगभग जनियुक्त जुड़वाँ या जुड़े हुए होते हैं। फल प्रारम्भ में हरा, नीला, लाल, बैंजनी और पकने के बाद काले रंग का हो जाता है। इसका फल गुठलीदार या अष्ठिफल (drupe) होता है। बीज कड़ा और अण्डाकार होता है।

भारत में सर्पगंधा हिमालय के पर्वतीय प्रदेशों, पंजाब से आसाम, विशेष रूप से देहरादून, शिवालिक रेन्ज, रुहेलखण्ड,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तरी उत्तर प्रदेश, गोरखपुर, [illegible], उत्तरी कनारा, दक्षिणी महाराष्ट्र, मद्रास राज्य के पश्चिमी और पूर्वी घाटों, बिहार में पटना और भागलपुर तथा उत्तरी और मध्य बंगाल में अधिकता से उगता है। यह सिक्किम, बर्मा, श्रीलंका और जावा द्वीप में भी पाया जाता है।

राउल्फिया कैनेसेन्स

यह राउल्फिया सर्पेन्टाइना के आसपास ही उगता है। विशेष रूप से भारत के नम और गर्म प्रदेशों में। इसके लिए बंगाल के चौबीस परगना और हावड़ा विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

ओषधियों की खोज

सर्पगंधा बड़ा ही निराला पौधा है। आधुनिक युग में इस पौधे के विभिन्न भागों से कई प्रकार की ओषधियाँ बनायी गयी हैं। इन ओषधियों को कई भयानक रोगों के उपचार में सफलतापूर्वक प्रयोग किया जाता है। इन ओषधियों के खोज की कहानी भी कम मनोरंजक नहीं है।

१९३१ के बाद भी डाक्टर वकील अपने अनुसन्धानों में लगे रहे। उन्होंने बहुत से तथ्यों का पता लगाया। पौधे के विभिन्न भाग भिन्न-भिन्न रोगों के उपचार के लिए उचित पाये गये। इससे स्विटजरलैण्ड के बासले नामक स्थान के वैज्ञानिकों ने यह सोचा कि शायद राउल्फिया की जड़ों में कुछ ऐसे अवयव हों जिसका पता अभी तक न लग पाया हो। उनकी यह धारणा निर्मूल नहीं थी। यहाँ के लोगों ने डा. एमिल श्लिटलर (Dr. Emile Schlittler) के नेतृत्व और सन्दर्शन में बहुत से अवयवों का पता लगा लिया। आप सोच सकते हैं कि वह क्षण उनके लिए कितनी प्रसन्नता का रहा होगा जब उन्होंने प्रथम मणिभ देखा होगा। वास्तव में यही वह अलकालायड (*alka-loid*) था, जिसका पता ३००० वर्षों तक नहीं चल सका और जो बाद में उतने ही भार की जड़ों से १,००० गुना अधिक शक्तिशाली सिद्ध हुआ। इन प्रयोगों के समय भारत से इस पौधे को स्विटजरलैण्ड भेजना अत्यन्त आवश्यक था जिससे उनके प्रयोगों में कोई रुकावट न आने पाये। ओषधियों को प्रारम्भ में जानवरों पर और सफल होने के बाद मनुष्यों पर प्रयोग किया गया। फिर तो वैज्ञानिक सर्पगंधा से तैयार की हुई ओषधियों द्वारा बड़े-बड़े भयानक रोगों के उपचार के विषय में निश्शंक हो गये। मणिभों को टिकियों के रूप में बहुत अधिक मात्रा में बनाया जाने लगा और सर्पासिल (*Serpasil*) के नाम से संसार के विभिन्न

सर्पगंधा की पत्ती एवं जुड़वाँ फल

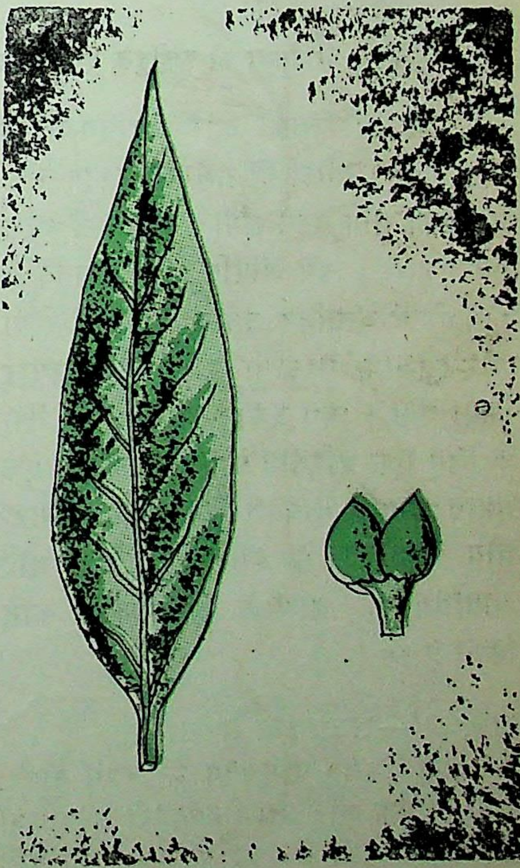

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्पगंधा की फलोंयुक्त एक शाखा

भागों में चिकित्सकों और रसायनज्ञों को भेजा गया। शीघ्र ही संसार के कोने-कोने में इसकी माँग बढ़ने लगी। सर्पासिल बहुत सफल हुआ। इस ओषधि द्वारा बहुत से रोगियों में अत्यधिक तनाव, मस्तिष्क रोगों और स्वभाव सम्बन्धी रोगों का उपचार किया गया। इस प्रकार मानवता के हित के लिए एक भारतीय पौधे की जड़ को एक महान ओषधि में बदल दिया गया। भारतीय वैज्ञानिकों ने इसके सही सूत्र और ओषधियों की जाँच के लिए बहुत काम किया है।

ओषधियाँ—राउल्फिया सर्पेन्टाइना

जड़—इससे पागलपन दूर करने वाली, शान्तिदायक और सम्मोहनकारी ओषधियाँ तैयार की जाती हैं। यह रक्त-चाप की गति को कम करती है। अंतड़ियों के दर्द और स्त्रियों में प्रसवकाल में गर्भाशय के संकोचन को बढ़ाने में प्रयुक्त होती है।

पत्तियों का रस—नेत्रों के चक्षणु पटल के धुँधलेपन को दूर करने में प्रयोग करते हैं। सर्पगंधा के बिहार किस्मों की जड़ में ८-१३% अलकलायड्स होते हैं। इसमें अजमैलीन (ajmaline), अजमैलिनीन (ajmalinine) पीले अलकलायड्स, सर्पेन्टीन (serpentine), सर्पेन्टिनीन (serpentinine) और अमणिभ अपधातु होते हैं।

देहरादून किस्मों की जड़ में १-१·३% सभी अलकलायड्स होते हैं लेकिन कोई पीला अलकलायड नहीं होता। इसमें दो अन्य अपधातु होते हैं। अजमैलीन और अजमैलिनीन के साथ ही साथ उभय गुणों वाले अलकलायड्स पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त जड़ों में औलियोरेजिन (oleoresin) और सर्पोस्टेराल (serposterol) पाया जाता है और इसका सर्जास अंश ही ओषधि के काम आता है।

बिहार किस्मों की जड़ में अजमैलिसीन (ajmalicine) भी पाया गया है। जड़ की छाल में ·१% आइसो अजमैलीन (isoajmaline) और १% नियो अजमैलीन (neoajmaline) होता है। सम्पूर्ण जड़ में ·०१% आइसो अजमैलीन और ०·१% नियो अजमैलीन होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जड़ों से प्राप्त एक औषधि राउल्फीन (*Rauwalfine*) द्वारा मेंढक, बिल्ली और चूहों में हृदय की गति कम हो जाती है। नसों के भीतर सर्पेन्टीन (१ मिलीग्राम प्रति-किलोग्राम जल) को सुई द्वारा प्रवेश कराने से कुत्तों में रक्तचाप कम हो जाता है। इससे छोटी आँत की आरोग्यता और बढ़ाव में वृद्धि होती है। आँत के क्रमांकुचक संकुचनों में कमी आती है।

पत्ती का निचोड़ा हुआ रस सारे अलकलायड्स और सर्पेन्टीन की उपस्थिति के कारण साधारण बिल्लियों में ग्रैवीय रक्त चाप कम हो जाता है। अजमैलीन और सर्पेन्टिनीन चाप बढ़ाते हैं। सर्पेन्टिनीन उपहृद (हृदय सम्बन्धी) पेशीतन्त्र को कम करता है किन्तु प्लैटिक संकोचन उत्पन्न करता है। श्वसन को उत्तेजित करता है। यह शान्तिदायक और सम्मोहनकारी होता है।

देहरादून किस्मों से उपलब्ध नियो अजमैलीन और आइसो अजमैलीन रीढ़ वाले और मस्तिष्क हीन जानवरों में प्रावसादक का काम करते हैं। प्रयोग में इस्तेमाल किये गये जन्तुओं में सर्जास का एक अंश शान्तिदायक और सम्मोहनकारी होता है। सर्पेन्टीन कुत्तों के लिए अवपीड़क और वाहिनी अभिस्तारक होता है। बिहार किस्म के पौधों से निकाला हुआ अलकलायड देहरादून किस्म की अपेक्षा अधिक विषैला होता है। १९५२ में रिसर्पिन (reserpin) को पृथक किया गया। इसका प्रभाव सम्मोहनकारी होता है और इससे रक्त चाप की गति भी कम की जा सकती है।

राउलफिया कैनेसेन्स

इस पौधे से राउल्सीन (*Rauwalscine*) नामक अलकलायड पृथक किया गया है। इसकी जड़ की छाल से ०·१%, तने की छाल से ०·२% और पत्तियों से ०·२% राउल्सीन निकाला गया है। जन्तुओं में यह हृदय वाहिनी प्रावसादक का कार्य करता है। यह भी ज्ञात हुआ है कि यह अन्य अलकलायड से अधिक विषैला होता है। इसका प्रभाव सीधा हृत्पेशी पर पड़ता है। नस के भीतर इसे सुई द्वारा प्रवेश कराने पर यह अत्यधिक सम्मोहन के उद्दीपन को समाप्त कर देता है। स्वकृत मांसपेशियों की तेजी को कम करता है। इस पौधे से पृथक किया हुआ एक अन्य अलकलायड रिसर्पिन शान्तिदायक और सम्मोहनकारी होता है। ●

आलू की छिलाई के साथ ही धुलाई भी

जर्मनी ने रबर के ऐसे दस्ताने तैयार किये हैं जिनमें लोहे की रज एक रेगमाल की तरह सतह पर जमा दी गयी है। इन दस्तानों को पहने हुए पानी की धार के नीचे आलू को धोते जाइये, वे साथ ही साथ छिलते भी जाएँगे!

स्वप्रकाशित वेल्ट पहनिए

न्यूयार्क के मैडिगन इलेक्ट्रानिक कारपोरेशन ने चौराहे के सिपाहियों के लिए ऐसी बेल्ट तैयार की है जो अधिकतम सुविधापूर्ण है। इसे पहनने के बाद उन्हें वे लाल परावर्तक शीशे लगाने की आवश्यकता नहीं रहती जिन पर सामने से आते वाहन का प्रकाश पड़ता है और उसके चालक को ज्ञात हो जाता है कि कोई सिपाही खड़ा है। इस बेल्ट में बत्तियों की माला रहती है और वे बत्तियाँ ऐसी बैटरी से प्रकाशित रहती हैं जो पुनः चार्ज की जा सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

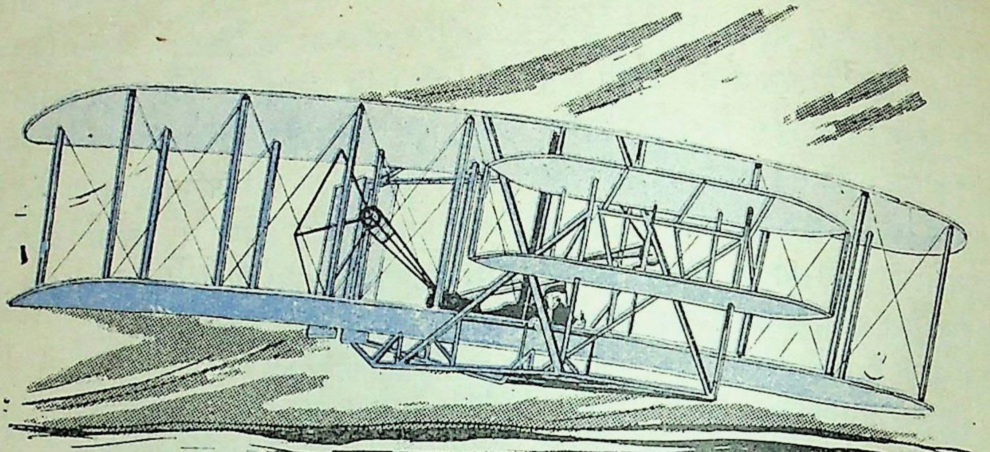

उड़न सिद्धान्त

राजेन्द्रकुमार

'मनुष्य कभी तो उड़कर रहेगा ही'—यह भविष्य वाणी रॉजर बेकन ने की थी। वह लगभग ७०० वर्ष पूर्व की बात थी। १५० वर्ष और बीत गये। १५वीं शताब्दी के उत्तरकाल में इस ओर पुन: प्रयत्न प्रारम्भ हुए। लियोनार्डो-डा-विंसी ने मनुष्य की यांत्रिक उड़ान के कुछ छोटे-बड़े सफल प्रयोग किये और साथ ही साथ उड़न-सिद्धान्त का विशद विवेचन भी प्रस्तुत किया। तत्पश्चात् विगत शताब्दी के अन्तिम दिनों से उड़ान के जो नियमित प्रयोग प्रारम्भ हुए, उनमें लियोनार्डो के लिखित विवरण, संकेत आदि ने उड़न सिद्धान्त को समझने में उल्लेखनीय योग दिया है।

चार अवस्थाएं

हवा में उतराती हुई किसी भी वस्तु पर चार प्रबल विरोधी बल दबाव डालते हैं—उत्थान (lift), गुरुत्व (gravity), प्रघात (thrust) तथा पश्चकर्षण (drag)। इनके प्रभाव क्रमश: इस प्रकार हैं—यान को ऊपर उठाना, नीचे खींचना, आगे बढ़ाना और पीछे खींचना। उड़ती हुई वस्तु की ये चार अवस्थाएँ हैं। इन परस्पर विरोधी खींचातानियों के बीच, अपना संतुलन बनाये हुए, हवा से भारी वस्तु, चाहे वह वायुयान हो या हेलीकॉप्टर, ग्लाइडर हो या जेट अथवा राकेट उड़ती चली जाती है। उपरोक्त चारों बल से जूझने के लिए यान में निम्न प्रकार की विभिन्न व्यवस्थाएँ की जाती हैं।

उत्थान

यान को ऊपर उठाने का काम पाँखों (wings) द्वारा किया जाता है। हेलीकॉप्टर में पाँखों के स्थान पर रोटर (rotor) लगाये जाते हैं। यान के पाँखों की रचना इस प्रकार की जाती है कि आगे की धार, पीछे की धार से अधिक उठी हुई रहे। फलस्वरूप, तीव्र वेग से आती हुई वायु, पाँख के एक विशिष्ट कोण पर टकराती है जिसे प्रघाती कोण (angle of

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

attack) कहते हैं। उस कोण पर टकराने के पश्चात् वह वायु यान के उस पिछले भाग को ऊपर उठा देती है। वह उठाव भी यान के पूरे उठान में लगभग एक चौथाई ही योग देता है। शेष कार्य हवा की उस निर्धारित मात्रा (air foil) को करना पड़ता है। इस क्रिया में निम्नलिखित बर्नोली सिद्धान्त (Burnolle Law) काम करता है।

बर्नोली ने अनेक प्रयोग करके देखा कि जब कोई भी द्रव चौड़े मार्ग से सँकरे मार्ग में गुजरता है तब उसका वेग बढ़ जाता है। गति वृद्धि के साथ-साथ मार्ग की दीवारों पर उक्त द्रव का दबाव घटता जाता है। बहती हुई वायु को भी द्रव रूप ही मानकर इस सिद्धान्त को अपना लिया गया है।

हेलीकॉप्टर की रचना बड़ी विलक्षण होती है। पवनचक्की के पंखों जैसे इसके

वायु के प्रभाव से यान की उठान (ऊपर से नीचे)—
१. उठान का कोण, २. कोण से प्रभावित वायु द्वारा नीचे की सतह से उठान ३. वायु के प्रति सामान्य अवरोध की अवस्था

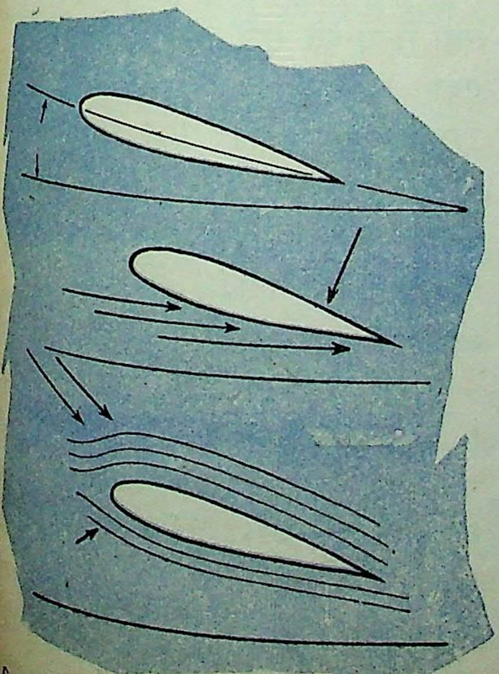

लम्बे-लम्बे पंख इस वायु में चाहे जो दिशा दे सकते हैं। यह सब उन बड़े पंखों के कारण है जो ऊपर लगे रहते हैं। सामान्यत: ये पंखे तीन परोंयुक्त होते हैं। प्रत्येक की रचना वायुयान की पाँख की भाँति होती है ताकि वायु का अधिक से अधिक लाभ उठाया जा सके। इन पंखों को चलाने में चालक वायु के प्रघात को विभिन्न आवश्यक कोणों पर लेकर गति तथा दिशा में भी विभिन्नता ला सकता है।

प्रघात

यान को आगे बढ़ाने तथा वायु को काटने के लिए वायु को समेटना और पीछे धकेलना आवश्यक है। अधिकतर वायुयानों में यह कार्य आगे का पंखा ही करता है। कुछ यानों में पीछे की ओर भी पंखे लगे होते हैं जो इस प्रकार वायु को फेंकते हैं जैसे तैराक अपने पाँवों से पानी को पीछे खदेड़ता रहता है। जेट विमान और राकेटों में यह क्रिया गैसों के वेगवान निष्कासन द्वारा सम्पन्न होती है।

संतुलन

यान को वायु में उठा लेना तथा गति दे देना ही काफी नहीं। वायु में उड़ते हुए यान को संतुलित रखना भी आवश्यक है। यह कार्य बड़ा जटिल है। इसके लिए यान में कुछेक संतुलन उपकरण रहते हैं। ये उपकरण यान के पूंछ वाले भाग में होते हैं। खड़ी आकृति वाले उपकरण को फिन्स (fins) कहते हैं तथा आड़ी आकृति वालों को स्टेबिलाइजर (stabilizer) कहते हैं।

नियन्त्रण

संतुलन के साथ ही यान के लिए दिशा नियंत्रण भी महत्त्वपूर्ण है। इसकी भी यंत्र-सज्जा पूंछ के ही भाग में स्थित रहती है जिसे टेल एसेम्बली (tail assembly) कहते हैं। इनमें फिन्स से जुड़े हुए डाँड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

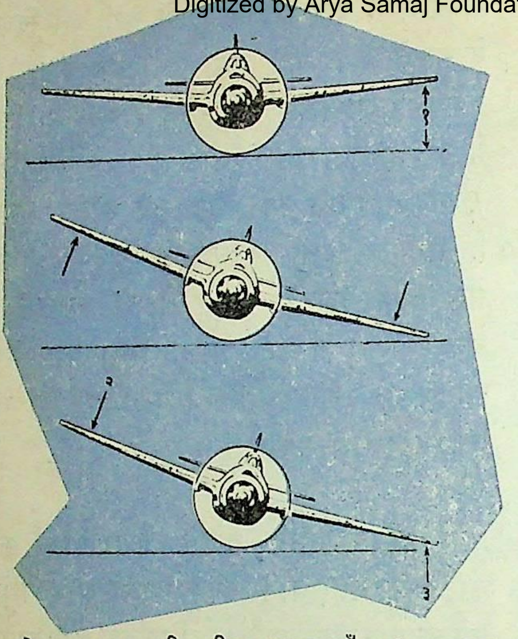

उड़ते हुए यान की तीन अवस्थाएँ—**१. समतुल अवस्था, (पांखों की डाइहेड्राल अवस्था में), २. रोलिंग अवस्था, ३. गति-परिवर्तन, (पांखों की नार्मल न्यूनाधिक अवस्थाओं में)**

सरीखे उपकरण, स्टेबिलाइजर से जुड़े हुए दो एलीवेटर और पाँखों के पिछले भाग में दो-दो सहपक्ष (ailerons) रहते हैं।

इनके अतिरिक्त यान में अनेक ऐसे भी महत्त्वपूर्ण उपकरण रहते हैं जिनका सीधा सम्बन्ध उड़ान से नहीं है। पेंदे में लगे पहिये (यदि धरती पर उतरना हो), तैराकी उपकरण (यदि समुद्री सतह पर उतरना हो) तथा स्कीइंग उपकरण (यदि बर्फ पर उतरना हो) ऐसे ही उपकरण हैं।

गत्यात्मक संतुलन

इसे डाइनेमिक स्टेबिलिटी (dynamic stability) कहते हैं। उड़ान की स्थिति में सामान्यतः तीन अवस्थाएँ ऐसी मानी जाती हैं जिनमें यान का संतुलन बिगड़ सकता है। असंतुलन की उन अवस्थाओं को रॉल (roll), यॉ (yaw) तथा पिच (pitch) कहते हैं। असंतुलन की अवस्था को नियंत्रित करने के लिए जब पाँखों की सहायता लेते हैं तब उसे डाइहेड्राल (dihedral) कहते हैं। यह संतुलन पुच्छ-सज्जा द्वारा भी पा लिया जाता है।

चालक-कक्ष

यह यान का कॉक-पिट (cock-pit) है। इसमें बैठा हुआ चालक एक दृष्टि अपने नियंत्रण-उपकरणों के बोर्ड पर तथा दूसरी दृष्टि वायुपथ पर रखता है। कहीं वह सहपक्षों को झुकाता है तो वायु का उठाव बढ़कर यान को ऊँचा उठाता है; तो कहीं पूँछ में लगे डाँड़ को घुमाता है तब यान दायें-बायें घूम जाता है। कहीं वह एलीवेटरों को उठाकर यान को नाक की सीध में ऊँचा ले जाता है।

चालक-कक्ष में प्रायः निम्न पाँच अधिकारी रहते हैं—कप्तान, फर्स्ट आफिसर, नेवीगेटर (चालक), रेडियो आफिसर तथा इंजीनियर आफिसर। मौसम की पूर्व सूचना, यात्रा पथ की निर्विघ्नता, यान में ले जाने वाले सामान और यात्रियों का कुल भार तथा यंत्र-सज्जा की पूर्ण क्षमता से सन्तुष्ट होकर ही कप्तान उड़ान की आज्ञा देता है।

नेवीगेटर का कार्य यान को सही गति तथा दिशा देते रहने का है। वायुमण्डल में सदैव ही कोई न कोई तीव्रगामी पवन रहता है। यदि पवन पीछे से आता रहा तो यान की गति अनावश्यक रूप से बढ़ जाएगी, यदि सामने से आया तो यान की गति मन्द पड़ जाएगी। इसी प्रकार दायीं

उड़ानगत यान पर लग रहे विभिन्न बल—१. उठाव, **२. गुरुत्व, ३. धकेल, ४. खिंचाव**

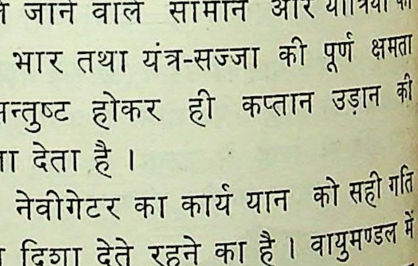

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

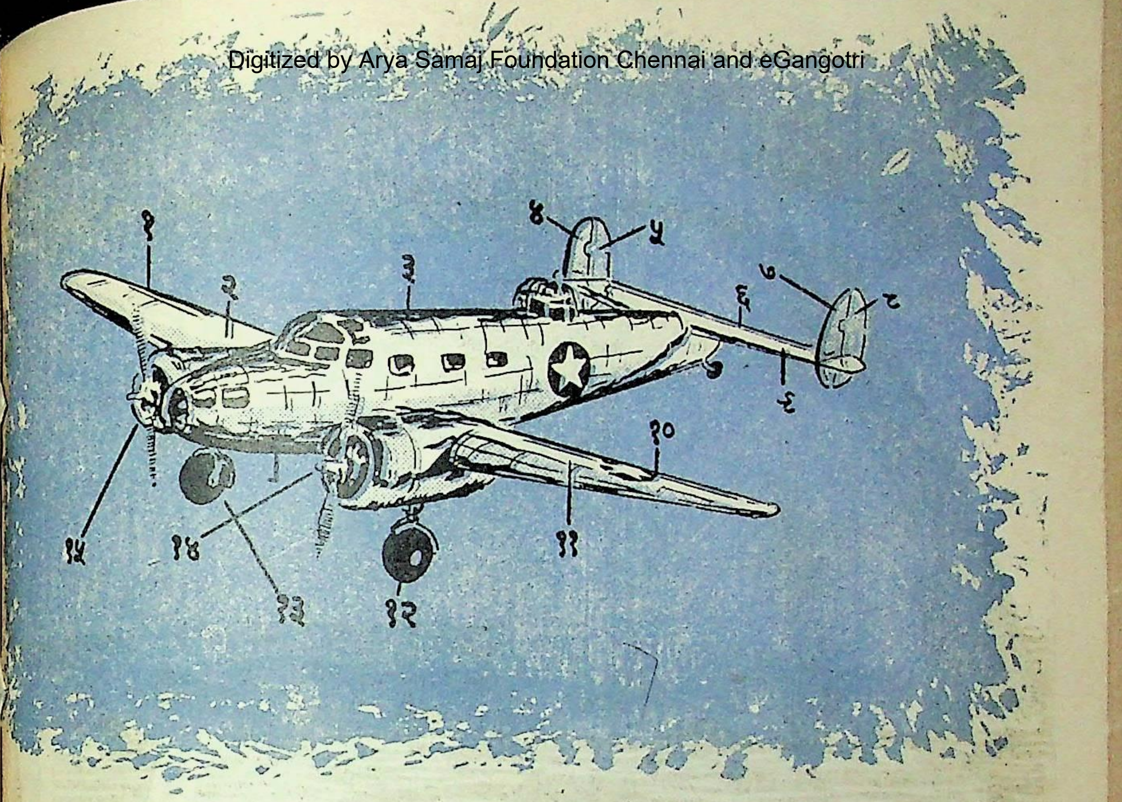

आधुनिक यान के कुछेक प्रमुख भाग—१. एलेरान, २. विंग, ३. फ्यूसिलेज, ४. फिन, ५. राडर, ६. एलीवेटर, ७. फिन, ८. राडर, ९. स्टेबिलाइजर, १०. एलेरॉन,, ११ विंग, १२, १३. लैण्डिंग गीयर १४, १५. पावर प्लान्ट्स

या बायीं ओर से आने वाला पवन यान की निर्धारित दिशा तथा गति में बाधा उत्पन्न कर सकता है। कप्तान की भाँति मौसम का अनुमान इसे भी पहले से ही कर लेना होता है।

रेडियो आफिसर का कार्य टेलीफोन तथा टेलीग्राफ द्वारा कन्ट्रोल स्टेशन से निरन्तर सम्पर्क बनाए रखना है। एयरोड्रोम यदि निकट है तो टेलीफोन द्वारा तथा दूर है तो टेलीग्राफ द्वारा सम्पर्क बनाये रखकर मौसम की सूचना प्राप्त तथा प्रसारित करनी पड़ती है। इस कार्य में राडर यंत्र बहुमूल्य सहायता करता है। जहाँ मौसम की खराबी से यान को उतारना आवश्यक हो और मार्ग भी दिखाई न पड़ता हो, वहाँ राडर से कार्य लिया जाता है।

इंजीनियरिंग आफिसर को यह देखना होता है कि यात्रा से पूर्व यान की मशीनरी ठीक है। इंजन की क्षमता, ईंधन आदि की व्यवस्था इसी के जिम्मे रहती है। ●

इस हाथ ले, उस हाथ दे

अमरीका में आलू के खेतों तक कृषियन्त्रों के लिए ईंधन-तेल पहुँचाकर प्रायः ही बड़े ट्रकों को वापसी यात्रा में खाली आना पड़ता था। इसके लिए यह उपाय ढूँढ़ निकाला गया कि एक ओर से तो वह विशाल ट्रक ४००० हजार गैलन तेल लादकर ले जाए और वापसी में उनके खेतों से मण्डी तक पहुँचाने के लिए ३५ टन आलू ले आए। इसके लिए ट्रक के पीछे एक ४० फुट लम्बा वैगन जोड़ दिया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

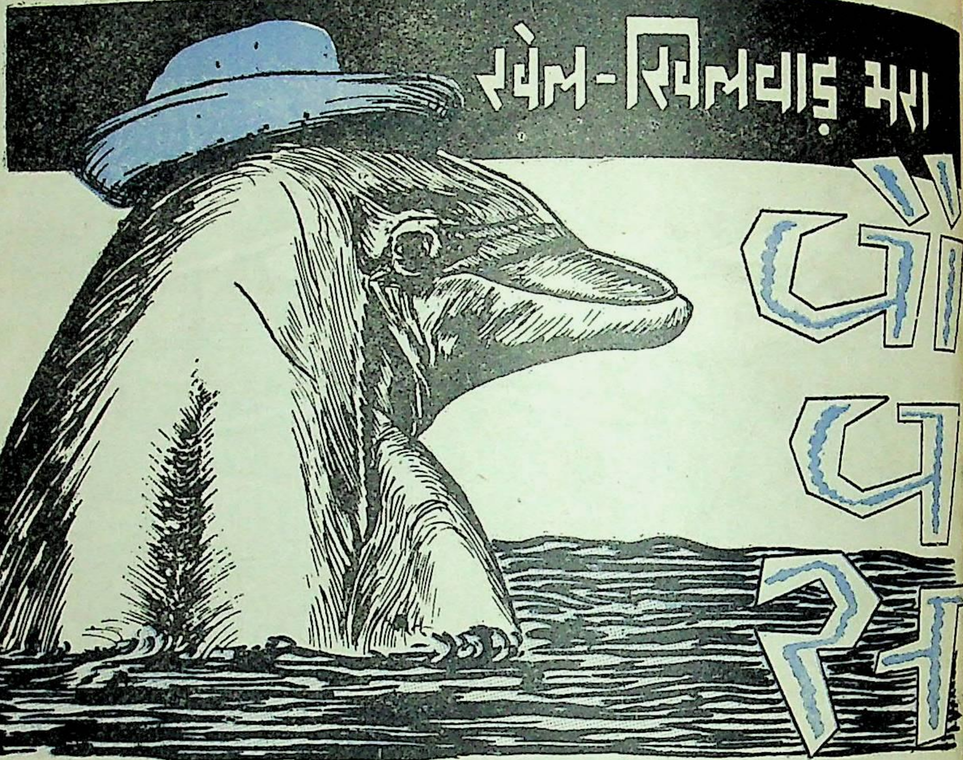

त्रिलोकीनाथ शर्मा

पौपस (porpoise) व्हेल परिवार का जलचर है। यह औसत ५-६ फुट लम्बा तथा २५०-३०० पौण्ड भारी होता है। इसकी पीठ काली तथा पेट सफेद होता है। सामान्य व्हेल की भाँति इसका नथुना एक छिद्र के रूप में सिर के ऊपर होता है और उसमें व्हेल की ही भाँति पानी की फुहार उड़ती है। इसकी पूँछ के सिरे के फ्ल्यूक (flukes) मछलियों जैसे ऊर्ध्वाधर न होकर क्षैतिज अवस्था में होते हैं। उनसे इसे उछलने और डुबकी लगाने में बड़ी सहायता मिलती है। इसकी बाह्य त्वचा के नीचे एक इंच मोटी चर्बी की तह रहती है। ऊपर तथा नीचे के जबड़ों में प्रत्येक में ४० से ५० तक दाँत होते हैं। इसकी बाह्यत्वचा बहुमूल्य चर्म बनाने में तथा चर्बी मूल्यवान तेल बनाने में काम आती है।

वैज्ञानिकों के अनुसार प्रागैतिहासिक काल में दैत्याकार थलचरों (dinosaurs) से बचने के लिए थलीय जीवन को छोड़कर जलीय जीवन अपनाने के लिए अनेक चतुष्पदों में पौपस भी रहे होंगे। उछलने वाली चंचल मछलियों की अपेक्षा पौपस कहीं अधिक (पानी की सतह से १० फुट तक) ऊँचा कूद सकता है। श्वास रोकने की क्रिया में भी यह कुशल है। पानी के अन्दर १० मिनट तक श्वास रोके रहना इसके लिए कठिन नहीं।

पौपस की श्रवणशक्ति अति तीव्र है। चमगादड़ के बाद इसी का स्थान है। यह भी चमगादड़ की भाँति ध्वनि-परावर्तन द्वारा अपने मार्ग की टोह ले लेता है। यह भिन्न-भिन्न प्रयोजनों के लिए विभिन्न ध्वनियाँ निकाल लेता है। हलकी करतल जैसी ध्वनि, मन्द सीटी, चहचहाना तथा रोषपूर्ण कर्कश स्वर निकालना इसके लिए सरल है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक प्रयोग-स्वरूप मादा पौपस को उसके बच्चे के साथ एक तालाब में इस प्रकार रखा गया कि बीच के पार्टीशन के कारण दोनों एक दूसरे को देख न सकें, केवल ध्वनि सुन सकें। इस पर देखा गया कि नन्हा पौपस बारबार सीटी की ध्वनि निकालता रहा और प्रत्युत्तर में मादा उसे मन्द और मीठे स्वर में दिलासा देती रही।

बुद्धिमत्ता और प्रशिक्षण-क्षमता

यह सिद्ध करने के लिए कि बुद्धिमत्ता के क्षेत्र में पौपस का स्तर अन्य जन्तुओं की अपेक्षा कहीं अधिक है फ्लोरिडा (अमरीका) स्थित यर्क लेबोरेटरी के अधिकारियों ने, विशेषत: मि. एडाल्फ फ्रान (Adolf Frohn) ने, एक पौसस को आश्चर्यजनक रूप से प्रशिक्षित किया है। उसके करिश्मे देखकर लोग आश्चर्यचकित रह जाते हैं और उनका कहना है कि उस पौपस में बोलने मात्र की कसर बाकी है। उक्त प्रयोगशाला के चेयरमेन मि. कर्नेलियस व्हिटने की पत्नी ने बड़े चाव से उस पौपस का नाम फिलपी (Flippy) रखा है। जब वह दो वर्ष का था तब वह लम्बाई में ६ फुट और वजन १५० पौण्ड था। प्रारम्भ में उसे २० फुट गहरे एक ऐसे कुण्ड में रखा गया था जिसमें ताजे समुद्री पानी का आवागमन जारी था।

फिलपी मछली खाना पसन्द करता है। अत: इसके प्रशिक्षक मि. फ्रान आरम्भ में इसके लिए मछलियाँ उस पानी में डालते थे किन्तु एक सप्ताह के अन्दर ही इसने उनके हाथ से धैर्य और सफाईपूर्वक मछलियाँ लेना सीख लिया। शीघ्र ही यह उनके अन्य अनेक संकेत भी समझने में दक्ष हो गया।

फिलपी अपने शिक्षक के संकेत पर पानी के ऊपर तब तक कलाबाजियाँ दिखाता रहेगा जब तक कि वह इसे रोकने के लिए दूसरा संकेत न करे। जब वह अपनी छड़ी को पानी में फेंकेगा तो यह उसके पीछे दौड़कर उसे ले आएगा और उसके हाथ में थमा देगा।

यह पानी से पूरा बाहर निकलकर दस फुट ऊँची लटकती हुई एक गेंद को लपक

भूख ने सताया और इस पालतू पौपस, फिलपी ने उछलकर खाने की घण्टी बजायी

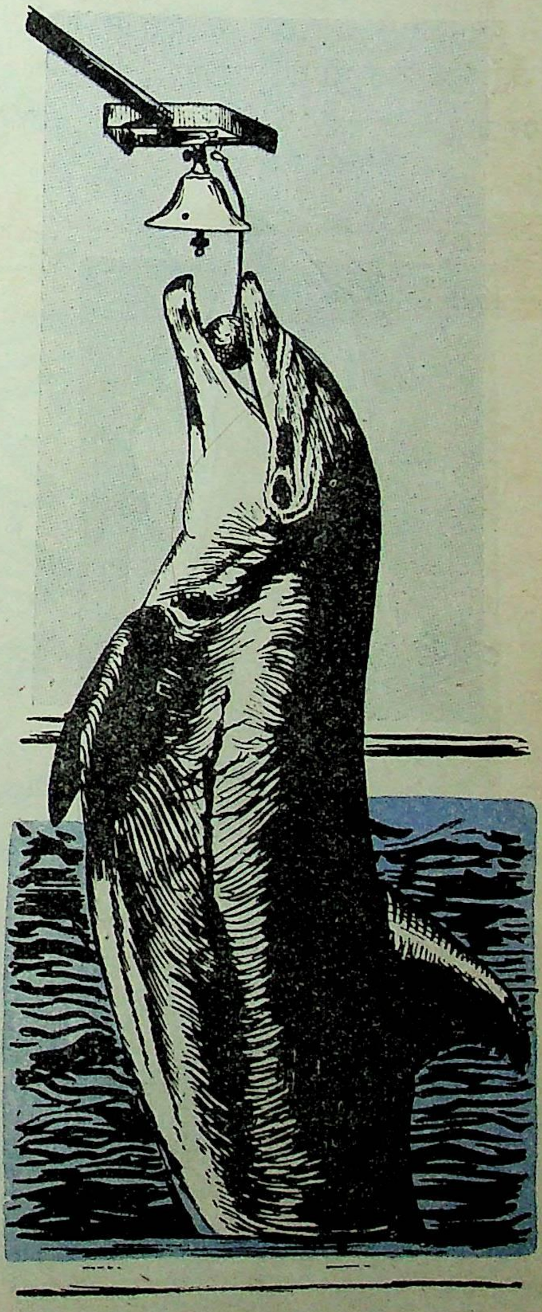

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेगा। वह गेंद एक घण्टे के सहारे लटकती होगी। जब यह उस गेंद को निश्चित क्रम में हिलाएगा तो वह घण्टा बज उठेगा। इसके पुरस्कारस्वरूप इसे दो मछलियाँ खाने को दी जाएँगी। अतः जब भी इसे भूख सताती है, यह उस घण्टे को बजा देता है, मानो खाने की घण्टी बजाता है।

मि. फ्रान अपने हाथ में रबर के बल्ब-युक्त एक हार्न लिये होंगे और यह उनके इशारे पर उसे मुँह में रखकर इस कोमलता से दबाएगा कि उस बल्ब में दाँत न गड़ने पाएँ और हार्न भी बज उठे।

कलाबाज पौपस पानी से बाहर, १० फुट ऊँची छलाँग लगा रहा है

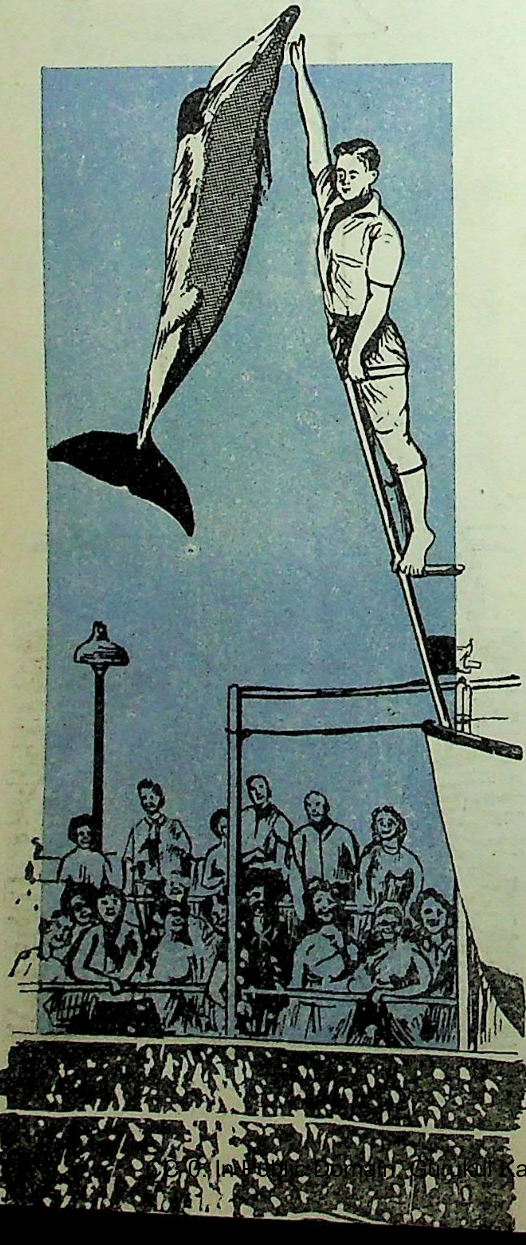

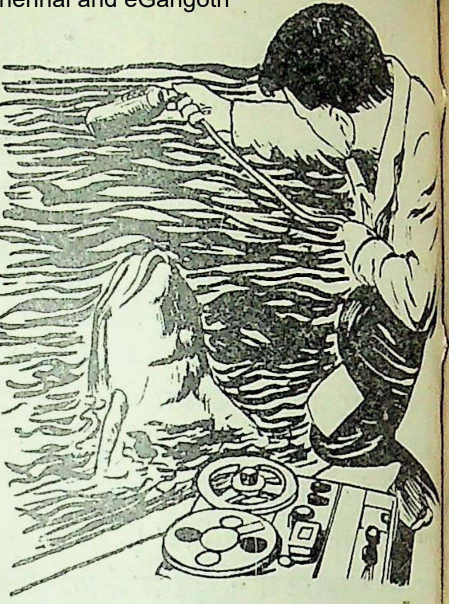

टेप रिकार्डर पर अंकित की जा रही पौपस की सं… तथा अन्य ध्वनियाँ

पानी से ऊपर १० फुट तक उछलने … अतिरिक्त इसे हवा में कलाबाजी भी दिखा… सिखाया गया है। ऊँची लटकती हुई ए… रिंग में से यह उछलकर बड़ी सफाई … निकल जाएगा।

इसने मि. फ्रान के कुत्ते से भी मित्र… कर ली है। यह उसे तख्ते पर बिठा… तालाब में दूर की सैर करा लाता है… बदले में वह भी इसका काम कर देता… अर्थात् जब इसका सिर धूप में गर्म हो जा… है तब मि. फ्रान उस पर थोड़ी-सी चर्बी … देते हैं वह कुत्ता उस चर्बी को इसके सिर … से चाटकर सिर को ठण्डक पहुँचा देता है…

कुमारी फ्रान भी इसे बहुत प्यार कर… है। वह एक तख्ते पर स्वयं खड़ी हो… इसे लगाम बाँधकर गहरे, खुले समुद्र… छोड़ देती है। यह उसे दूर-दूर की … करा लाता है। अनेक बार यह डूबते … व्यक्तियों को भी पीठ के सहारे कि… लाकर बचा चुका है।

[शेष पृष्ठ ३८ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छी तथा असहारी !

गोल्डन ईगल

लागर बीयर

गोल्डन इगल बीयर अच्छी है क्योंकि यह ठण्डी, ताजी तथा साफ है—यह सर्वत्र लोकप्रिय बीयर गर्मियों में वास्तविक प्यास बुझाने वाली है ।

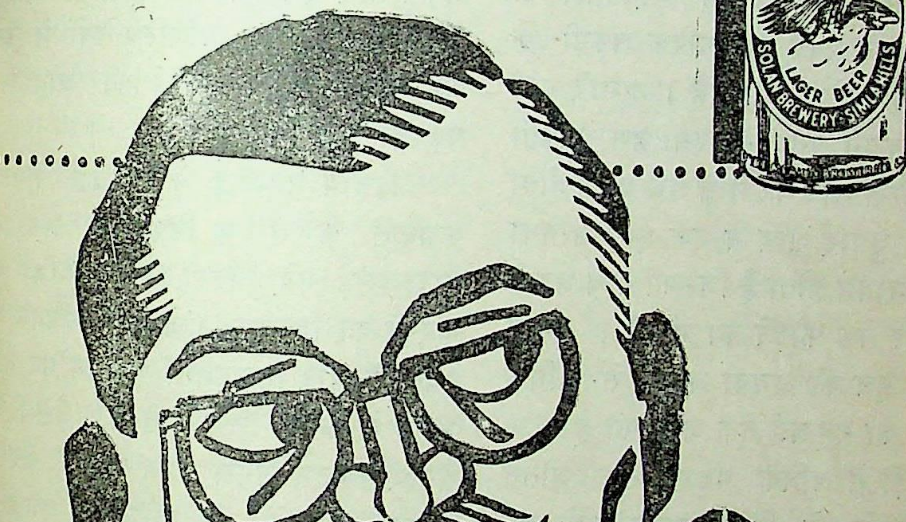

डायर मीकिन ब्रुअरीज लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

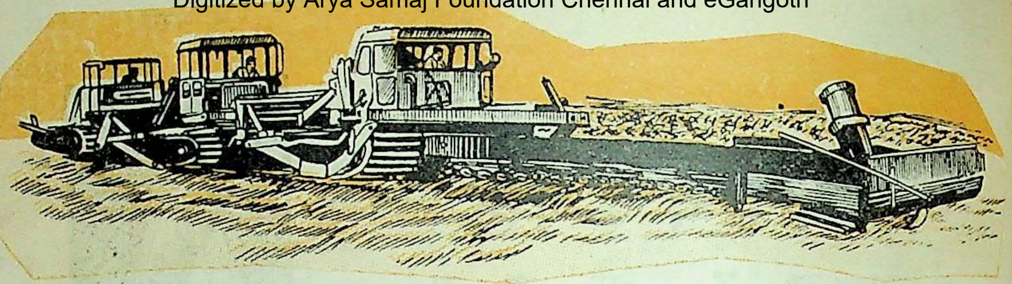

दैत्याकार हल

ब्रजेन्द्रप्रसाद पालीवाल

हल का नाम लेते ही हम भारतवासियों के मन पर अपने पारम्परिक लकड़ी के हल का चित्र खिंच जाता है। हमारे यहाँ न जाने कितने समय से इसी हल से खेती होती आयी है और धरती से अन्न प्राप्त होता रहा है। जुताई शब्द में एक ऐसी भावना का भी समावेश होता है जिसका बोध धरती को गहराई तक फोड़ने का भी है। हमारे लकड़ी के हल की क्षमता अधिक से अधिक ३-४ इंच की गहराई तक जाने की है।

लकड़ी से अधिक गहराई तक जोतने वाले लोहे के बने मिट्टी पलटने वाले हल होते हैं जो बैलों अथवा ट्रैक्टरों से खींचे जाते हैं। बैलों वाले हल गहराई में ६-७ इंच तक पहुँच जाते हैं और बड़े हलों से दो जोड़ी बैलों द्वारा ८-९ इंच गहरी जुताई सम्भव है। पश्चिमी देशों में बैलों के स्थान पर घोड़ों का प्रयोग होता था। वहाँ भी ऐसे ही हल व्यवहार में लाये जाते थे। साधारणतः ट्रैक्टरों वाले हल १२-१४ इंच तक धँस सकते हैं। 'सबसॉइलर' नामक उपकरण से धरती का उदर २४ इंच की गहराई तक विदीर्ण किया जा सकता है।

गहरी और उथली जुताई के अपने-अपने अलग-अलग प्रयोजन हैं। विशिष्ट कार्यों के लिए विभिन्न उपकरण काम में लाये जाते हैं। साधारणतः खेती में ३ इंच से लेकर ८-९ इंच तक की गहरी जुताई पर्याप्त होती है। विशेष परिस्थितियों में इससे भी अधिक गहरी जुताई की आवश्यकता पड़ जाती है।

द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् लेखक ने कलकत्ते के सैनिक डिपो पर अमरीकनों द्वारा छोड़े गये ट्रैक्टरों और विभिन्न उपकरणों का विशाल पुंज देखा जिनसे युद्ध-स्थल में और निकटवर्ती भू-भाग पर भाँति-भाँति के काम लिये जाते थे, जैसे बिजली तैयार करना, जंगल साफ करना, फँसी हुई मोटर लारियों को खींचकर दल-दल से बाहर निकालना आदि-आदि। इनमें एक दानवाकार हल भी था जिसका मोल्ड बोर्ड मनुष्य के आकार से भी ऊँचा था। इसका काम सेना के लिए दुर्दमनीय स्थलों पर मोटर यातायात के लिए कामचलाऊ सड़कें बनाना था। एक बार एक ओर से कूँड़ लगा दिया और फिर पलटकर ३० फुट के अन्तर से लौटते हुए विपरीत दिशा में एक और। लीजिए, ३० फुट चौड़ी सड़क पर २ फुट ऊँची मिट्टी चढ़ गयी। और ऊँची चाहिए तो एक बार फिर इसी क्रम को दुहरा दीजिए। बुलडोजर से समतल करके इन्हीं भारी-भारी ट्रैक्टरों को पहले एक-दो बार इस सड़क का उद्घाटन कर लेने दीजिए। आनन-फानन में सड़क बन गयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसके लिए कई हजार मजदूरों की जरूरत होती।

यंत्रीकरण की दिशा में एक छोटे से देश नीदरलैण्ड के प्रयास और सफलता उल्लेखनीय हैं। वहाँ मुख्य प्रश्न था कृषि के विकास द्वारा उपज को बढ़ाना। अपने देश के किसी जिले के बराबर आकार वाले इस देश में उपजाऊ धरती व्यावसायिक समृद्धि के फलस्वरूप बढ़ते हुए कारखानों और आवास संस्थानों में घिरती जा रही थी। सदियों से हमारे देश की भाँति वहाँ भी भूमि का कुटुम्ब के सदस्यों में बँटवारा होते-होते छोटे-बड़े असमान और बिखरे हुए खण्डों में विभाजन हो गया था। न समुचित यातायात व्यवस्था हो सकती थी और न सिंचाई के साधनों का पर्याप्त दोहन। कहीं-कहीं पानी के निकास की समुचित व्यवस्था के अभाव में भूमि क्षारीय और अम्लीय होती जा रही थी।

डच अर्थशास्त्रियों ने हिसाब लगा कर बताया कि यदि वर्तमान भूमि का उपयुक्त लाभदायक इकाइयों के आकार वाले क्षेत्रों में विभाजन कर दिया जाए जिनमें यंत्रीकृत कृषि सुविधानुसार हो सके तो इतनी ही भूमि में बिना किसी अन्य प्रकार के विशेष प्रयत्न के उपज को कम से कम १५ प्रतिशत बढ़ाया जा सकता है। खेती योग्य भूमि वहाँ फालतू थी ही कहाँ? अतः ११,८०० एकड़ भूमि पल्ले पड़ी, जिसमें पानी भिदता ही था। मिट्टी की तहें कहीं रेतीली, कहीं नीचे अत्यन्त कठोर जिनमें पानी रिसना दूभर। पानी निरन्तर भरे रहने के कारण अत्यधिक वनस्पति उगने और सड़ते रहने से भूमि में अम्लों का अनुपात अत्यधिक बढ़ गया था, इसके विपरीत कहीं-कहीं क्षारीय सफेद काले लवणों का जमाव। कहीं-कहीं स्थितियाँ अपने देश की समस्याओं के समान थीं।

नीदरलैण्ड में एक सरकारी संस्था है अलाभकारी आधार पर, जिसका कार्य है डच भूमि का सुधार, मछलियों के व्यापार में सुविधाएँ प्रदान करना और वन्य सम्पदा में वृद्धि और वृक्षारोपण की व्यवस्था करना। आज इस संगठन का मुख्य कार्य कृषि योग्य अथवा अयोग्य भूमि को सुधारकर और समुचित आकार के फार्म बनाकर किसानों में वितरण करना है। इस काम के लिए इस संस्थान में विशेष मिट्टी सरकाने वाले भूमि-स्थानान्तरण (earth moving) उपकरण, जुताई और खुदाई के यन्त्रादि को कार्यानुरूप विकसित करके खरीद लिया गया है।

उपरोक्त संस्था ने यह योजना अपने हाथ में ली जिसमें ११,८०० एकड़ भूमि को खेती योग्य बनाकर सड़क, सिंचाई और पानी के निकास की उत्तम व्यवस्था करके वांछित आकार के खण्डों में विभक्त करना था।

बीस 'कैटरपिलर' नामक लोहे के चैन प्रणाली पर चलने वाले विशाल शक्तिशाली ट्रैक्टरों को इस काम के लिए विशेष रूप से उपयोग में लाया गया। इनके साधारण लोहे की पट्टीनुमा सरकने वाले जूतों को तीन-तीन फुट चौड़ा बनाया गया जिससे गीली-नरम धरती पर जोर लगाने पर इनका भीतर फँसना रोका जा सके। सामान्य पुरजों और अवयवों को कार्य के अनुरूप और भी सुदृढ़ बनाया गया।

कृषि विभाग के भूमि विशेषज्ञों ने आदेश दिये थे कि नीचे की मिट्टी को आवश्यकतानुसार २ फुट से लेकर ६ फुट तक गहरी जुताई द्वारा उथल-पुथल करके भूमि कणों के व्यवधान में परिवर्तन कर दिया जाए। ऐसी असाधारण गहरी जुताइयों के लिए विशेष प्रकार के उपकरण तैयार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किये गये । चार फुट तक की गहरी जुताई के लिए 'यूनिवर्सल डीप प्लाउ' का प्रयोग किया गया । इस लोहे के पुतले को तीन पहिये के एक छकड़े में सवार कराके बैठाया गया । ३० इंच की गहराई तक तो एक ट्रैक्टर से काम चल जाता था, किन्तु अधिक गहरी जोत के लिए कभी-कभी सौ अश्वशक्ति वाले दो अथवा तीन ट्रैक्टरों को लगाना पड़ता था ।

अपना लकड़ी का हल, जो अब सभी जगह 'देशी हल' के नाम से विख्यात है, केवल तीन इंच की गहराई तक धरती फोड़ता है तो मिट्टी फूलकर लगभग ६ इंच की गहराई का भान कराती है । कल्पना कीजिए कि जब चार-छह फुट धरती विदीर्ण होगी तो मिट्टी के ढूहे पर्वत से ही दिखने लगेंगे ! इस अनुपम दैत्य के आकार का अन्दाजा तो आपने उसके समीप खड़े साधारण ऊँचाई के मनुष्य से लगा ही लिया है ।

१००० एकड़ से अधिक भूमि में ४ फुट से भी अधिक गहरी जुताई की आवश्यकता अनुभव हुई । इसके लिए छह फुट की गहराई तक कार्य कर सकने वाले एक दूसरे हल का निर्माण किया गया जिसकी हरस को द्रवशक्ति से दबाव (hydraulic pressure) युक्त उपकरण कक्ष से संयुक्त कर दिया गया जिस पर और अधिक भार और अतिरिक्त दबाव डालने का प्रबन्ध उपरोक्त 'यूनिवर्सल प्लाउ' के ढाँचे पर किया गया । कूँड़ में और नीचे उतारकर इस नवीन शक्ति सम्पन्न हल से ५-६ फुट की गहरी जुताई की सफल व्यवस्था हो गयी ।

गहरी जुताई तो हो गयी, किन्तु एक नयी समस्या सामने आयी । निचले पानी के निकास को सुधारने, भूमि परतों में भूमिकणों की व्यवस्था (soil texture) सुधारने और भली-बुरी परतों को तोड़-फोड़कर संयुक्त कर देने का काम तो हो गया, किन्तु ऊपर की उपजाऊ भूमि का इस विकराल मिट्टी के ढूहों में पता न चला । वह तो इसमें न जाने कहाँ विलीन हो गयी । क्षारयुक्त, कंकरीली-पथरीली, खट्टी-कड़वी निकम्मी मिट्टी के ढेर से तो दशा पहले ही अच्छी थी । आप तो जानते ही हैं कि खेती के उपयुक्त तो धरती की केवल ५ से १० इंच तक की ही गहराई होती है । इसी में फसल देने की शक्ति होती है और किसानों के सभी साधन—खाद-पानी, जुताई-निराई आदि, इसी ऊपर की मिट्टी को और अधिक उपजाऊ बनाने के

Cat D7 के आकार की विशालता का अनुमान इस यंत्र में दायीं ओर लगे हुए फल (spade) से लगाया जा सकता है

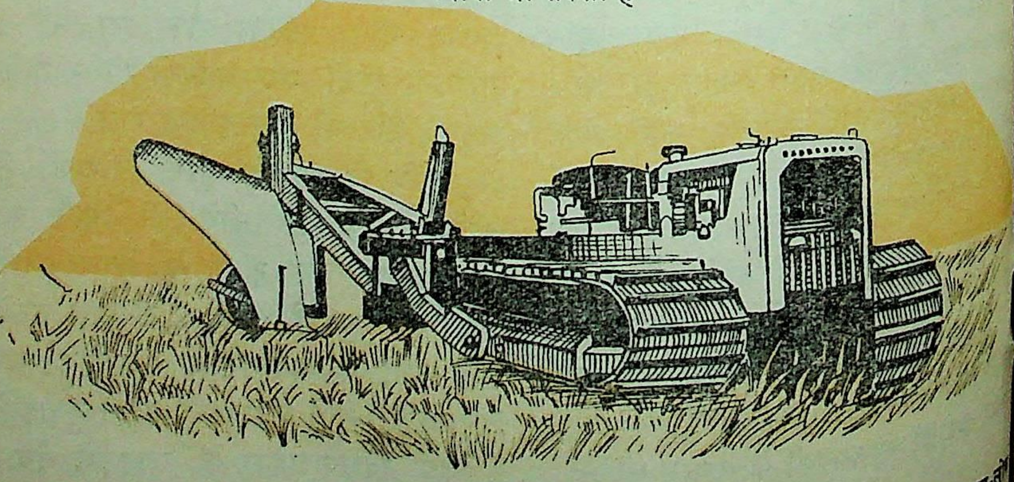

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

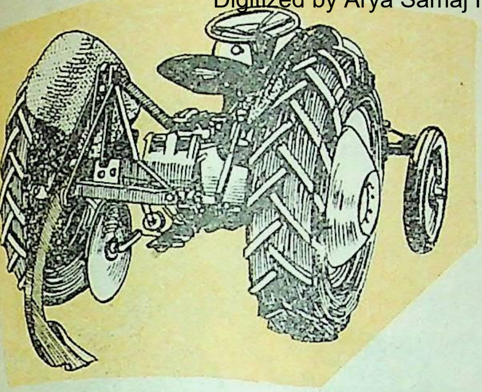

फर्गुसन निर्मित यह सबसॉइलर (Sub-soiler) भूमि के कठिन स्तरों को तोड़ कर इकसार कर देता है

निमित्त होते हैं। यदि कभी गहरी जुताई और वह भी मिट्टी पलटने वालों हलों से की जाए तो सारी उपजाऊ भूमि बहुत नीचे चली जाती है वहाँ पौधों के मूल संस्थान की पहुँच नहीं हो पाती और खेती असफल हो जाती है। प्रकृति अपने विभिन्न साधनों द्वारा कई वर्ष की लम्बी अवधि में इस प्रकार नष्ट की गयी भूमि का पुनरुद्धार कर पाती है। परन्तु प्रारम्भ में तो ऐसी धरती से साधारण उपज भी नहीं ली जा सकती।

डच वैज्ञानिकों ने इस प्रतिकूल स्थिति से निबटने के लिए भी व्यवस्था कर ली। जहाँ ऊपरी पर्त में खनिज और कार्बनिक (organic) खाद्य पदार्थों की प्रचुर मात्रा थी उसको पूर्व स्थिति में सुरक्षित रखने के नवीन यान्त्रिक उपकरण की शोध कर ली। इस नवीन यंत्र (elevator) द्वारा जिसमें ऊपर उठाने वाली चर्खी के सिद्धान्त का समावेश है ४ से १० इंच की मोटाई की ऊपरी धरती की परत को एक उपकरण से छीलकर पिछली जुताई में खोदी गयी मिट्टी के कूँड़ के ऊपर यथापूर्व जमा दिया जाता है, फलस्वरूप जोती हुई जगह फूली-फूली तो अवश्य दिखती है, किन्तु और यथास्थान मिट्टी ऊपर ही रहने के कारण उसकी उपजाऊ शक्ति नष्ट नहीं होती।

आगे का काम आसान रह गया। बुलडोजरों द्वारा भूमि को फिर समतल कर दिया गया। यथास्थान सिंचाई की नालियाँ, सड़क और पानी के निकास के लिए बलचियों अथवा खाइयों के निशान लगा दिये गये। फिर मशीनों से ही ऊपर वर्णित प्रणालियों द्वारा सड़कों का निर्माण किया गया। ट्रैक्टर के उपकरणों द्वारा नालियाँ और खाइयाँ बना दी गयीं।

खेत की सीमा निर्धारित हो जाने पर रोटेवेटर या रोटरी हलों द्वारा, जो मिट्टी को एकबारगी मथानी की भाँति मथकर रख देते हैं, खेत की अन्तिम तैयारी करके भूमि खण्डों को उनके आगामी स्वामियों के सुपुर्द कर दिया।

यह भूमि अब अपने जीवनकाल में इन दैत्याकार भारी-भरकम हलों द्वारा फिर कभी नहीं रौंदी जाएगी, क्योंकि साधारण खेती में इन दानवों का कोई स्थान नहीं। इतनी गहरी जुताई की कभी आवश्यकता नहीं होती। अधिक से अधिक कभी-कभार १०-१५ वर्षों में साधारण 'सबसॉइलर' का व्यवहार करने की आवश्यकता पड़ सकती है जो गहराई में तो दो फुट नीचे की परतों को फोड़ देता है, किन्तु वैसे मिट्टी को छेड़ता नहीं। कालान्तर में अत्यधिक सिंचाई करने के कारण नीचे की भूमि की परतें कठोर पड़ जाती हैं और पानी का रिसाव रुक जाता है तब सबसॉइलर के उपयोग की आवश्यकता पड़ सकती है। ●

गहरी खोदाई के लिए पहले यूनिवर्सल हल बनाया गया था परन्तु इसके पहिये नर्म भूमि में धसने लगे तब NHM यूनिट ने यह नया ट्रैक्टर तैयार किया

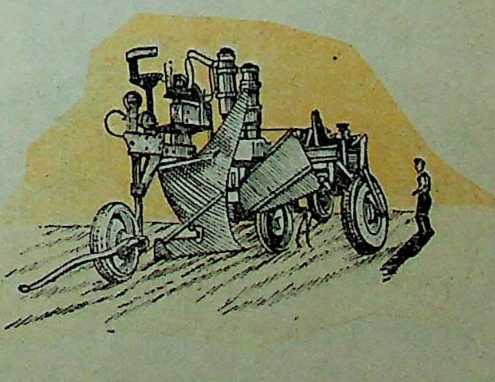

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोना, सोना ही है

रमेशचन्द्र कपूर

पृथ्वी के गर्भ में सोना अधिक होते हुए भी काफी बँटा-बिखरा है, अतः यह सहज-प्राप्य नहीं है। सागर जल भी सोने का अटूट भण्डार है। माना जाता है कि एक घन किलोमीटर सागर जल से पाँच टन तक सोना प्राप्त किया जा सकता है। ज्वालामुखी की सक्रियता के फलस्वरूप निर्मित ग्रेनाइट की चट्टानों तथा क्वार्ट्ज की दरारों में भी सोना रहता है। उसे रीफ गोल्ड (Reef Gold) कहते हैं। उसके अतिरिक्त आर्सेनिक, लोहा, जस्ता तथा चाँदी आदि के सल्फाइड यौगिकों में भी यह मिश्रित रहता है। जब नदियाँ इन चट्टानों को घिसती हुई तथा अन्य पदार्थों को घुलाती हुई आगे बढ़ती हैं तब शेष अघुलनशील स्वर्ण-कण भी उसी रेत (alluvial sand) में चलते हैं। उनसे प्राप्त होने वाले सोने के किंचित बड़े टुकड़ों को नगेट (nugget) कहते हैं।

आकाश से गिरती हुई उल्काओं में भी सोना पाया जाता है। सोने की अल्प मात्राएँ कुछेक अयस्कों (ores) में भी होती है। उदाहरणार्थ, एक लाख ग्रेनाइट के भाग ·०३७ भाग सोना, सैण्डस्टोन में ·०००७ ·००३ भाग, तथा चूना-पत्थर में ·०००७ भाग सोना पाया जाता है। संयुक्त अवस्था में बिस्मथ औराइट (bismuth aurite) तथा गोल्ड-सिल्वर-टैल्यूराइड सोने के मुख्य अयस्क हैं। अमरीका, साइबेरिया, ट्रान्सवाल (अफ्रीका), न्यूगिनीं, ब्रिटिश कोलम्बिया तथा आस्ट्रेलिया प्रमुख स्वर्ण उत्पादक देश हैं।

अमरीका की पहली खान

अमरीका में सोने की पहली खान प्राप्त होने का इतिहास रोचक है। जनवरी १८४८ में सुहावने सदनों जेम्स मार्शल नामक एक धनाढ्य व्यक्ति घोड़े पर सवार केलीफोर्निया के जंगलों का निरीक्षण करता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ जा रहा था । चलते-चलते वह सानफ्रान्सिस्को की उस सीमा पर पहुँचा जहाँ सेक्रामेण्टो नदी बह रही थी । उसने सोचा कि वन-काष्ठ की चिराई का कारखाना खोलने के लिए वह स्थान अच्छा रहेगा क्योंकि नदी में बड़े-बड़े लट्ठे सरलता से बहाकर लाये जा सकेंगे । वहीं पर भूमि का निरीक्षण करते हुए उसे एक पीला और चमकीला ढेला मिला । ध्यान से देखा और खुरचा तो पाया कि वह सोना था ! हर्षावेग में उसने चारों ओर बारीकी से देखना शुरू किया तो अगल-बगल २-३ ढेले और भी मिले ।

सोने का ममत्व नहीं, महत्त्व मात्र

एक भौतिक अथवा रसायनशास्त्री के लिए सोना ममत्व की वस्तु नहीं है । उसके लिए इसका महत्त्व इसकी उपयोगिताओं के कारण है । सोना आवर्त-तालिका (Periodic Table) के प्रथम वर्ग के 'ब-समूह' (B-Group) में ताँबे और चाँदी के साथ स्थित एक धातु-तत्त्व है । सोने का आपेक्षिक घनत्व १९·३२ है जो केवल प्लेटिनम के समकक्ष और अन्य समस्त धातुओं से अधिकतम है । अन्य धातुओं की अपेक्षा यह १०६४°C ताप पर सरलता से पिघल जाता है किन्तु वाष्परूप में यह सहज ही परिवर्तित नहीं होता । २६००°C पर यह उबलने लगता है । शुद्ध अवस्था में यह इतना नर्म होता है कि इस पर नाखून से खरोंच लगाया जा सकता है ।

आधुनिक उपकरणों के द्वारा रसायनज्ञ किसी भी धातु में एक करोड़वें भाग जितने सोने के सूक्ष्माणु का पता लगा लेता है । सोने की तन्यता तथा घनवर्द्धता अत्यधिक है । एक औंस सोने से ५० मील लम्बा तार खींचा जा सकता है तथा इसका तीन इंच लम्बा, चौड़ा और मोटा एक टुकड़ा पीट-पीटकर इतना लम्बा-चौड़ा फैलाया जा सकता है कि वह एक एकड़ भूमि पर बिछाया जा सके ।

सोना मुलायम होने के कारण ताँबे से मिश्रित होकर ही काम आता है । उस अवस्था में इसकी शुद्धता अंकों में दी जाती है, यथा—७५० अर्थात् ७५ भाग सोना और शेष भाग ताँबा । इसकी शुद्धता कैरट से मापी जाती है । २४ कैरट का सोना शुद्ध माना जाता है । १८ कैरट का सोना १८/२४ शुद्धता का माना जाएगा ।

स्वर्ण-खनन

नदियों की लोम मिट्टी (alluvial sand) से सोना प्राप्त करने की विधि अब अधिक लाभप्रद नहीं रही । पहले भी स्वर्ण-अन्वेषकों को जब लोम मिट्टी से सोना नहीं मिलता था तब वे ऐसी चट्टानों की खोज में रहते थे जिनसे घुल-घुलकर स्वर्णकण नदियों में चले आते थे । अतः चट्टानों और खदानों से स्वर्ण प्राप्ति का प्रयत्न किया जाने लगा ।

इसके लिए काफी गहरी खानें बनायी जाती हैं । दक्षिण अफ्रीका की संसार प्रसिद्ध

२५०० वर्ष पूर्व की संस्कृति के प्रतीक स्वरूप एक युद्ध का एक दृश्यांकन इस सोने की कंघी पर आज भी सुरक्षित है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ट्रान्सवाल की खानें अति विशाल उद्योगों में गिनी जाती हैं। साधारणतया ये खानें ४५०० से ७००० फुट तक गहरी हैं। हाल ही में एक खान की गहराई ९३०० फुट तक पहुँच चुकी है और सम्भव है कि उसे लगभग दो मील अर्थात् १०४०० फुट तक पहुँचा दिया जाए। ऐसी प्रत्येक खान में ४-५ हजार श्रमिक काम करते हैं। खुदाई करने वाली शाफ्ट ४० फुट लम्बी और १० फुट चौड़ी होती है।

खान के नजदीक ही अनेक विशाल कारखाने रहते हैं। खान से निकाले हुए अयस्क को कूटने-पीसने तथा धोने-छानने से लेकर शोधित सोना तैयार करने तक के समस्त कार्य इन कारखानों में सम्पन्न होते हैं। खान से निकले हुए एक टन अयस्क से लगभग पाव तोला सोना निकल पाता है।

धातु-कर्म

खान से निकले हुए अयस्क को निम्नलिखित मुख्य विधियों से गुजरना पड़ता है।

कुटाई-पिसाई—सबसे पहले अयस्क के बड़े टुकड़ों को मशीनों द्वारा तोड़कर छोटा कर लिया जाता है। छोटे टुकड़ों को

स्वर्णमिश्रित अयस्क, औरिफेरस क्वार्ट्ज को ऐसे सरल युक्त स्टाम्प मिलों में कूटा-पीसा जाता है

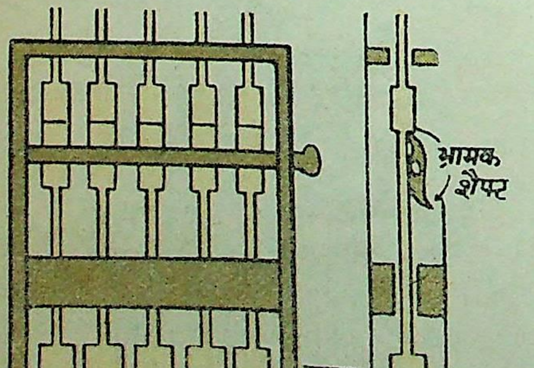

मूसल-चक्कियों (stamp mills) में बारीक पीसा जाता है। मूसल-चक्कियाँ इस्पात की बनी होती हैं और एक लम्बी पंक्ति में लगी रहती हैं। प्रत्येक का मूसल लगभग १२५० पौण्ड भारी होता है। ये मूसल ७-८ इंच की ऊँचाई से प्रति मिनट ९६ बार चोट करते हैं जिससे खरल में रखा अयस्क सरलता से पिस जाता है। पिसे हुए अयस्क को छलनीनुमा पत्थर पर रखकर उस पर पानी की तेज बौछार डाली जाती है। इस विधि द्वारा सोने के बारीक कण नीचे के छिद्रों से निकल आते हैं।

समाहरण—सोने की कणयुक्त रेती (जिसे लोम मिट्टी भी कहते हैं) को पानी से धोने पर हलकी बालू मिट्टी बह जाती है और भारी स्वर्ण-कण नीचे बैठ जाते हैं।

तसलों में धोना—बालू तथा कंकड़ के मिश्रण को बड़े-बड़े तसलों में पानी के साथ हिलाते हैं। इससे पथरीला पदार्थ अलग छँट जाता है और स्वर्णयुक्त बारीक बालूकण नीचे बैठ जाते हैं। इन्हें स्वर्ण-धूलि कहते हैं।

प्लेसर तथा हाइड्रोलिक माइनिंग—पहली विधि में लकड़ी की लम्बी नालियों में स्वर्णमिश्रित बालू को पानी की तेज धार में बहाते हैं। फलतः नालियों में लगे तिरछे तख्तों में स्वर्णकण जमा हो जाते हैं। दूसरी विधि में पानी की वह धार हाइड्रोलिक यन्त्रों द्वारा फेंकी जाती है। इसीलिए इस विधि का नाम हाइड्रोलिक माइनिंग दिया गया है। इन विधियों में लोहे के कण पृथक करने के लिए चुम्बक की भी सहायता ली जाती है। शुद्ध अवस्था में अयस्क प्राप्त करके जिन विधियों से सोना प्राप्त किया जाता है, उनमें निम्न मुख्य हैं।

मेकार्थर फारेस्ट सायनाइड विधि—इस विधि में अशुद्ध स्वर्ण-कणों पर सोडियम सायनाइड के घोल की प्रतिक्रिया कराके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

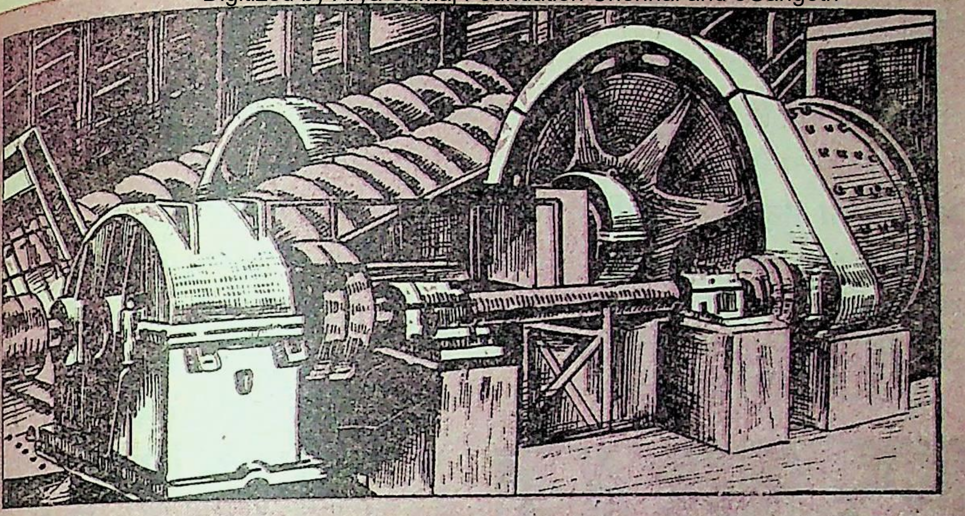

बृहत् पैमाने पर स्वर्ण अयस्क इस बड़ी चक्की में पिसता है, तत्पश्चात् सायनाइड के घोल की उस पर प्रक्रिया करायी जाती है

संकीर्ण लवण—सोडियम अवरो सायनाइड बना लिया जाता है। उस संकीर्ण घोल में जस्ता डालने से स्वर्ण-कण अवक्षिप्त हो जाते हैं। जस्ता बिछाने के लिए जस्ते की तहें बिछी हुई लकड़ी के बक्से में उस संकीर्ण घोल को एकत्र किया जाता है। इस विधि से ८५–९०% तक सोना प्राप्त हो जाता है।

प्लेटनर क्लोरीन निष्कर्षण विधि—इस विधि में अयस्क को सूखा तप्त करके उसमें से सल्फर तथा आर्सेनिक की शुद्धियाँ दूर कर दी जाती हैं। तत्पश्चात् उसे भिगोकर लकड़ी की नादों में रखकर उस पर क्लोरीन प्रवाहित किया जाता है। इससे स्वर्ण, गोल्ड क्लोराइड में परिणत हो जाता है। ३६ घण्टे बाद उसे पानी से धोकर उसमें फेरस सल्फेट मिलाते हैं जिससे स्वर्ण अवक्षिप्त हो जाता है।

सोने में चाँदी, सीसा, ताँबा तथा अन्य धातुओं की भी अशुद्धियाँ रहती हैं। उन्हें दूर करने के लिए सोने को सुहागे और सोडियम नाइट्रेट के साथ गरम किया जाता है। इससे अशुद्ध धातुएँ मैल के रूप में ऊपर तिर आती हैं।

भारत में सोने का उद्योग

भारत में कोलार की खानों से अधिकांश सोना प्राप्त होता है। कोलार की स्वर्ण खानें संसार प्रसिद्ध बड़ी तथा गहरी खानों में से हैं। इनकी गहराई १$\frac{३}{४}$ मील से भी अधिक है तथा अन्दर ही अन्दर सुरंगों की कुल लम्बाई ६०० मील तक की है। ड्यूरेल्यूमिन के बने दो बड़े-बड़े कक्ष ऐसे हैं जिनमें एक साथ ५० व्यक्तियों का बोझ अथवा पाँच टन अयस्क लादकर ७००० फुट लम्बी तथा २०-२० टन भारी जंजीरों द्वारा १-१$\frac{१}{२}$ मील ऊपर खींच लिया जाता है। इन खानों में ६०,००० से भी अधिक श्रमिक काम करते हैं तथा पिछले वर्षों में लगभग २,२८,००० औंस सोना प्रतिवर्ष निकाला जाता रहा है।

सोने का मुलम्मा

ताँबे तथा चाँदी की बनी वस्तुओं को सोने का रूप देने के लिए उन पर सोने के पत्र चढ़ाये जाते हैं अथवा विद्युत-रंजन (electrolysis) द्वारा सोने का पानी चढ़ाया जाता है। तीसरी विधि रोल्डगोल्ड की है। इस विधि में ताँबे अथवा चाँदी की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चद्दर पर सोने की पतली चद्दर रखकर अत्यधिक दबाव पर रोल (roll) करते हैं। इस प्रकार सोने के सूक्ष्म कण ताँबे-चाँदी की परतों में समा जाते हैं और चद्दर का रंग सोने जैसा हो जाता है। उस चद्दर को काटने पर अन्दर से भी सुनहरा रंग ही दिखता है।

सोने की चमक कभी मन्द नहीं पड़ती। इस गुण का उपयोग अवरक्त किरणों (infra-red rays) द्वारा ताप पहुँचाने के लिए इन चमकीले परावर्तकों (reflectors) में किया जाता है

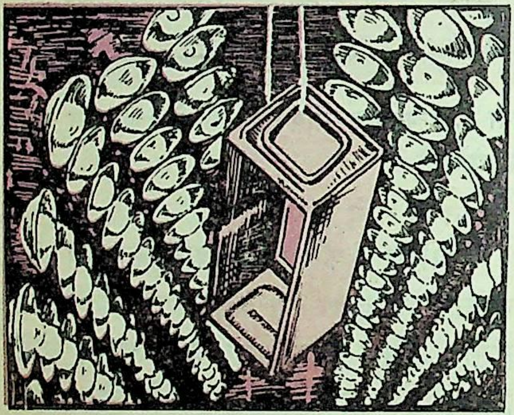

सोने के उपयोग

सोना अत्यन्त मूल्यवान धातु है। इसका उपयोग अधिकतर आभूषणों तथा सिक्कों में होता आया है। ब्रिटिश सिक्का २२ कैरट (९१.६६%) तथा अमरीकी सिक्का २१.६ कैरट (९०%) का बनाया जाता है।

सामान्य धातुओं की अपेक्षा सोने में अनेक रसायनों से अप्रभावित रहने का विलक्षण गुण है। यह नाइट्रिक तथा हाइड्रोक्लोरिक एसिड के मिश्रण में घुलनशील है। प्राचीन कीमियागरों को यह रहस्य ज्ञात था। अतः वे अम्लों के इस घोल को अम्लराज कहते थे। स्वर्ण के ऐसे घोल से चमकीला रंग बनाना भी वे जानते थे और उसका उपयोग रूबी ग्लास (ruby glass) बनाने में करते थे। अब तो स्वर्णघोल फोटोग्राफी तथा ओषधियों में भी काफी प्रयुक्त होता है। ●

बगैर गोली के शिकार

तास के ७२ वर्षीय शिकारी बेइशेबायेव ने वर्ष भर में शिकार तो ४७ लोमड़ियों का किया किन्तु उन्हें गोली एक भी नहीं चलानी पड़ी। एक खूँख्वार, फुर्तीले बाज की मदद से वे शिकार करते हैं। वे लोमड़ी की ताक में रहते हैं और ज्योंही लोमड़ी इधर-उधर हुई, उनका पालतू बाज अपने गज-गज लम्बे डैने फैलाकर बिजली की तरह उस पर टूट पड़ता है और पलक मारते उसका शिकार करके इनके पास ला पटकता है।

चलता-फिरता दैत्याकार भूमि-खोदक

२० मंजिल ऊँचा और ६०००० टन भारी एक्सकैवेटर (भूमि-खोदक) इस योग्य है कि सरलता से चाहे जहाँ घूम सकता है और नर्म धरती पर भी चल सकता है। ७-७ टन के ५०० डम्परों के बराबर अकेला काम देने वाला यह यन्त्र यूक्रेन की शेवर्चेको कोयला-खानों में काम कर रहा है, जहाँ वह एक घण्टे में ३००० घन मीटर मिट्टी खोद देता है।

पौधे तेजी से उभारे जा सकेंगे

राई, गेहूँ और कुछेक पत्तियों से सोवियत वैज्ञानिकों ने एक ऐसा पदार्थ तैयार किया है जिसकी एक ही बूँद का इंजेक्शन पौधे को छः घण्टे धूप में रखने के बराबर लाभ पहुँचाता है और उसकी वृद्धि में सहायक होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तरिक्ष किरणों का निर्माण

डा. अयोध्याप्रसाद शर्मा

बहुत दिनों से अनन्त आकाश से आने वाली अन्तरिक्ष किरणें ही ऊर्जायुक्त मौलिक कणों की प्रधान स्रोत रही हैं। अब तक वैज्ञानिक इन किरणों की खोज करने में ही लगे रहे हैं। उन्होंने किरण-कणों की शक्ति तथा उनके गुणों का ज्ञान प्राप्त करने के हेतु आकाश की ओर बैलून एवं हवाई जहाज उड़ाये, पर्वत शिखरों और समुद्र की गहराइयों में प्रयोग किये तथा आकाश की गहरी ऊँचाइयों में राकेट और कृत्रिम उपग्रह भेजे। काफी जानकारी प्राप्त करने के उपरान्त वैज्ञानिकों ने किरण-कणों को प्रयोगशाला में उत्पन्न करने की ओर कदम उठाया। आज वह आधुनिक आणविक यन्त्रों द्वारा जितनी मात्रा में चाहे उतनी मात्रा में ऊँची ऊर्जा के सूक्ष्मातिसूक्ष्म मौलिक कणों को निर्मित कर सकता है। जिस प्रकार की घटनाएँ ब्रह्माण्ड के हृदय में संघटित होने वाली प्रक्रियाओं से उत्पन्न होती हैं, ठीक उसी प्रकार की घटनाएँ आज प्रयोगशाला में मानव निर्मित एक्सीलरेटर में पुनर्निर्मित होती रहती हैं। इन एक्सीलरेटरों द्वारा अत्यधिक गति और ऊर्जा वाले प्रोटॉन, ड्यूट्रॉन, एल्फाकण एवम् इलेक्ट्रॉन जैसे आवेशयुक्त कण पैदा होते हैं।

एक्सीलरेटरों का विकास

एक्सीलरेटरों का विकास बहुत ही परिश्रम और अनेक कठिनाइयों के पश्चात् हुआ है। सर्वप्रथम काक्राफ्ट और वाल्टन नामक दो ब्रिटिश वैज्ञानिकों ने एक एक्सीलरेटर बनाया था। यह एक बहुत ही सरल त्वरणकारी नली का यन्त्र था जिसमें ऊँचे विभव वाले इलेक्ट्रोडों को वैकुअम में रखकर प्रोटान कण को सफलतापूर्वक काफी त्वरण दिया गया था।

तत्पश्चात् जटिल यन्त्रों का निर्माण होता गया और उनसे उत्पन्न कणों की गति और शक्ति भी बढ़ती ही चली गयी। उन दिनों दो प्रकार के एक्सीलरेटरों का निर्माण किया जाने लगा। एक तो वह जिनमें कणों का त्वरण सरल रेखा में दिया जाता था तथा दूसरे वह जिनमें त्वरण वृत्ताकार मार्ग में दिया जाता था। पहले प्रकार के एक्सीलरेटरों को रैखिक एक्सीलरेटर तथा दूसरे प्रकार के एक्सीलरेटरों को साइक्लोट्रॉन कहा जाता है। साइक्लोट्रॉन के अतिरिक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

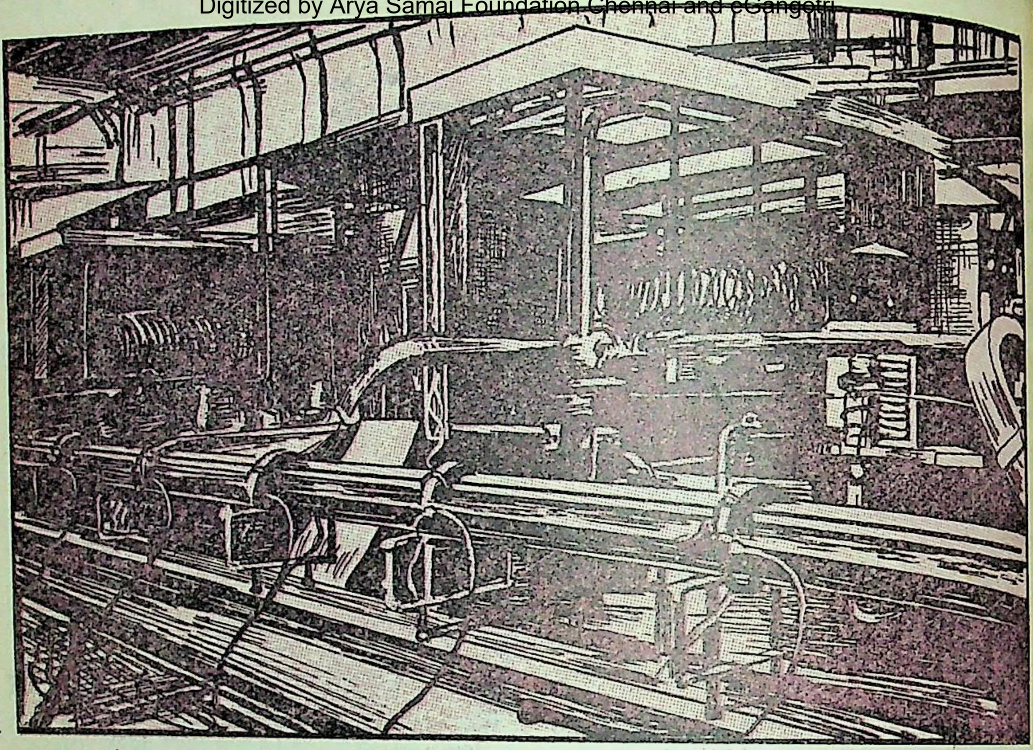

स्टेनफर्ड लीनियर एक्सीलरेटर जो एक लम्बी वैकुअम ट्यूब में इलेक्ट्रान वेग से फेंकता है

बीटाट्रॉन, सिंक्रोटॉन, सिंक्रोसाइक्लोट्रॉन, प्रोटॉन-सिंक्रोट्रॉन आदि अन्य एक्सीलरेटर भी हैं जिनमें कणों को सर्पिल मार्ग में घुमाकर उच्च गति और ऊर्जा का अनोखा त्वरण उत्पन्न किया जाता है।

रैखिक एक्सीलरेटरों से केवल दस लाख इलेक्ट्रॉन वोल्ट तक की ही ऊर्जा के कण उत्पन्न किये जा सकते हैं परन्तु साइक्लोट्रॉन से लगभग पन्द्रह गुनी ऊर्जा के अर्थात् डेढ़ करोड़ इलेक्ट्रॉन वोल्ट तक के कण निर्मित किये जा सकते हैं।

साइक्लोट्रॉन का निर्माण सन् १९३१ में ई. ओ. लौरेन्स नामक अमरीकन वैज्ञानिक ने किया था। रैखिक एक्सीलरेटरों के इलेक्ट्रोडों को काफी ऊँचा विभव देकर कणों को काफी ऊँची ऊर्जा प्रदान की जा सकती है परन्तु साइक्लोट्रॉन में विशेषता यह होती है कि एक ऊँचे विभव के मुकावले में बहुत कम विभव को ही लगातार बारी-बारी से कई बार देकर अर्थात् प्रत्यावर्ती विभव को लगाकर कणों को काफी ऊँची ऊर्जा प्रदान की जा सकती है।

सन् १९४४ में रूसी वैज्ञानिक वेक्स्लेर तथा सन् १९४५ में अमरीकन वैज्ञानिक मैकमिलन के ऑटो-फेजिंग सिद्धान्त के आधार पर सिंक्रो-मशीनों का भी निर्माण किया गया। साइक्लोट्रॉन में त्वरणशील कण का भार वैज्ञानिक आइन्स्टीन के सापेक्ष-वाद सिद्धान्त के आधार पर लगातार बढ़कर त्वरण प्रक्रिया की राह में बाधा डालता है तथा कणों की परम ऊर्जा को सीमित कर देता है। प्रोटॉन के लिए यह सीमा लगभग दस करोड़ इलेक्ट्रॉन वोल्ट ही होती है जो प्राकृतिक अन्तरिक्ष किरणों के प्रोटॉन कणों की ऊर्जा से काफी कम है। अतः सिंक्रोसाइक्लोट्रॉन में इलेक्ट्रोडों का जो प्रत्यावर्ती विभव लगाया जाता है उसकी आवर्ति कणों की गति, भार तथा ऊर्जा बढ़ते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही कम करना आरम्भ कर दी जाती है ताकि कणों की गति और लगाये गये प्रत्यावर्ती विभव में सामंजस्य बना रहे। यही कारण है कि इस सिद्धान्त पर बनाये गये साइक्लोट्रॉन को आवर्तित-संक्रमण साइक्लोट्रॉन अर्थात् सिंक्रोसाइक्लोट्रॉन के नाम से पुकारते हैं। अतः यह सिंक्रो यन्त्र कणों की बढ़ती हुई गति के साथ-साथ बढ़ते हुए भार के कारण उत्पत्ति-कमी को भी पूरा करता रहता है तथा कणों का भार त्वरण प्रक्रिया की राह में बिलकुल भी बाधक न होकर उच्चकोटि की ऊर्जा के कणों को उत्पन्न करता है।

रूस के सिंक्रोसाइक्लोट्रॉन

सन् १९५० में निर्मित रूसी सिंक्रोसाइक्लोट्रॉन का विशाल विद्युत चुम्बक ७००० टन भार का है। इस चुम्बक के ध्रुवीय सिरे ६ मीटर व्यास के हैं तथा यह आश्चर्यजनक चुम्बकीय तीव्रता प्रदान करता है। दर्शकों की चाभियाँ, चश्मे, पाकेट के चाकू, कफ बटन तथा ऐसे ही धातु निर्मित पदार्थों को यह चुम्बक अपनी ओर खींच लेता है।

इस विशाल विद्युत चुम्बक से जो चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न होता है वह घड़ी की स्प्रिंग की भाँति एक समावर्तक सर्पिल कक्षा में कणों को घुमाता रहता है। कणों की गति धीमे-धीमे बढ़ती चली जाती है। प्रारम्भ में यह गति कुछ किलोमीटर प्रति सेकण्ड ही होती है, परन्तु बाद में बढ़कर २४ या २५ लाख किलोमीटर प्रति सेकण्ड हो जाती है अर्थात् कणों की गति प्रकाश की गति से थोड़ी ही कम रह जाती है। कणों की यह दौड़ धातु के एक कक्ष में होती रहती है जो विद्युत चुम्बक के दोनों ध्रुवों के बीच स्थित होता है। इस कक्ष में पहले से ही पम्पों द्वारा हवा निकालकर वैकुअम तैयार कर देते हैं ताकि कणों के व्यवस्थित उड़ान में कोई बाधा न पड़ सके। इसी कक्ष में दो उच्च विभव वाले इलेक्ट्रोड होते हैं तथा इन्हीं दोनों इलेक्ट्रोडों के बीच के स्थान में कणों का त्वरण-कार्य होता है। इन इलेक्ट्रोडों को स्थिर विभव नहीं दिया जाता बल्कि प्रत्यावर्ती ऊँचे विभव वाला प्रवाह एक सशक्त लघुतरंग जनरेटर (जनित्र) के द्वारा इन इलेक्ट्रोडों तक बराबर भेजा जाता है और वह नियमित अवधि से एक के बाद धनात्मक से ऋणात्मक और ऋणात्मक से धनात्मक रूप में बदलता रहता है। इन इलेक्ट्रोडों का आवेश इतनी जल्दी बदलता रहता है कि कण इलेक्ट्रोडों के बीच की जगह में त्वरण प्राप्त करने के लिए उचित समय में ही पहुँच जाते हैं। एक इलेक्ट्रोड अपने से विपरीत आवेश वाले कण को आकर्षित कर लेता है। यह कण उतनी ही

हार्वेल (इंग्लैण्ड) स्थित काक्राफ्ट-वाल्टन जनरेटर, एक्सीलरेटर के लिए उच्च धारा की विद्युत प्रवाहित करता है

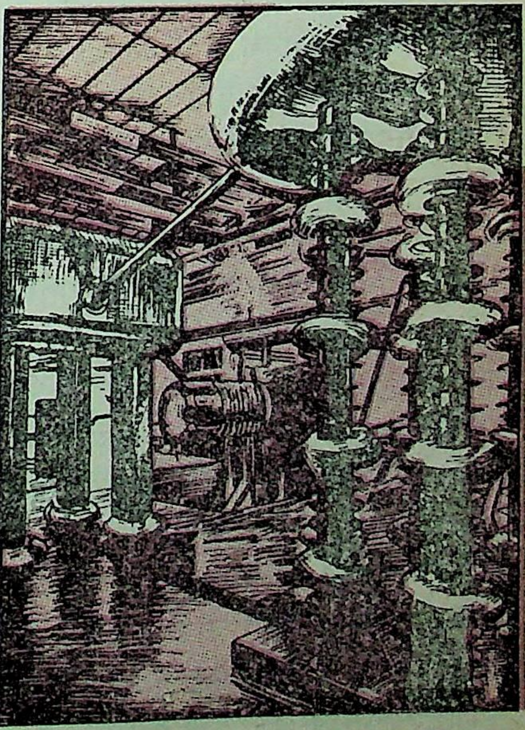

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

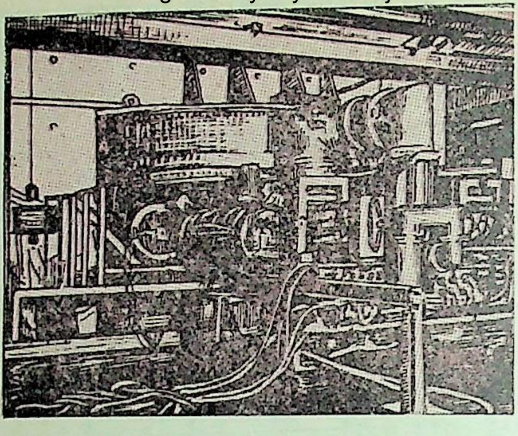

हार्वेल स्थित सिंक्रोसाइक्लोट्रॉन

देर तक इसके द्वारा आकर्षित रहता है जब तक कि उसे यही एक आवेश मिलता रहता है। जैसे ही आवेश बदलता है तो दूसरा इलेक्ट्रोड कणों को आकर्षित करना शुरू कर देता है। इस प्रकार से इन दोनों इलेक्ट्रोडों की एकत्रित क्रिया उस कण का त्वरण बढ़ाने में तथा उसकी ऊर्जा को उत्प्रेरित करने में सहायक होती है। इन इलेक्ट्रोडों के बीच के त्वरण क्षेत्र में कण प्रत्येक आधे चक्कर में अपनी ऊर्जा और गति बढ़ाता जाता है और अन्त में कणों की गति तथा ऊर्जा अति विशाल तथा भयानक हो जाती है। त्वरण-युक्त कणों के भार में वृद्धि का सारा प्रभाव एक परावर्तक कन्डेन्सर द्वारा स्थानान्तरित किया जाता है।

आयन स्रोत का स्थान कक्ष के बीचो-बीच चुम्बकीय क्षेत्र के केन्द्र से समस्थित होता है। प्रोटॉन कण प्राप्त करने के लिए हाइड्रोजन गैस को आयन स्रोत में भर दिया जाता है। आयनीकरण की क्रिया में हाइड्रोजन गैस के अणुओं का इलेक्ट्रॉन कवच अलग हो जाता है और यही नग्न हाइड्रोजन नाभिक प्रोटॉन कण कहलाते हैं जिनको एक मशीन में त्वरण दिया जाता है। जैसे ही ये प्रोटॉन कण स्रोत से उड़कर कक्ष में पहुँचते हैं, विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र उसे आकर्षित करना शुरू कर देता है तथा जैसे ही चुम्बकीय क्षेत्र की ध्रुवीयता बदलती है त्वरणशीलता का कार्य आरम्भ हो जाता है।

ऑटोफेजिंग के सिद्धान्त के आधार पर 'जल्दी आने वाले', 'समय पर आने वाले' अथवा 'देर से आने वाले' सभी कण उसी प्रकार से एक ही उच्चतम ऊर्जा को प्राप्त कर लेते हैं जैसे कि नियम से चलने वाले कण प्राप्त करते हैं।

इस सिंक्रोसाइक्लोट्रॉन से ६८ करोड़ इलेक्ट्रॉन वोल्ट वाली ऊर्जा के प्रोटॉन कण उत्पन्न किये जा सकते हैं। मशीन से बाहर निकलने पर विशाल ऊर्जायुक्त कण एक विशेष प्रकार के प्लेट-लक्ष्य पर बमवर्षा प्रारम्भ कर देते हैं। यह लक्ष्य सामान्यतः बहुत ऊँचे ताप पर गलने वाली धातु का बना जाता है। इस बमवर्षा से प्लेट-लक्ष्य से न्यूट्रॉन, मेसॉन तथा गामा किरणें आदि उत्पन्न होने लगती हैं। प्लेट-लक्ष्य के अणुओं का विखण्डन होकर उससे दूसरे तत्त्वों के नाभिक पैदा होने लगते हैं। सिंक्रोसाइक्लोट्रॉन से मुक्त होकर प्रोटॉन, न्यूट्रॉन और मेसॉन आदि कण कौलिमीटर की मजबूत इस्पात नलियों के विशेष मार्गों से गुजरने लगते हैं। इन विभिन्न कणों पर वैज्ञानिक अपना शोधकार्य करते रहते हैं। सिंक्रोसाइक्लोट्रॉन से उत्पन्न होने वाले कणों का स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है, इसलिए एक्सीलरेटर को बहुत दूर के नियन्त्रकों से चालित किया जाता है। इन नियन्त्रकों के लिए एक अलग इमारत के बड़े कमरे में मुख्य नियन्त्रक मेज होती है तथा उसी इमारत में सिंक्रोसाइक्लोट्रॉन के विद्युत संभरण की सुविधा होती हैं। इस मुख्य नियन्त्रक मेज पर अगणित यन्त्रोपकरण होते हैं। मेज पर रंगीन प्रकाश बत्तियाँ चुम्बक, वैकुअम पम्प, परावर्तक, उच्च आवर्ति जनरेटर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनाने वाले और हवा देने वाले यन्त्र तथा बिजली के उप-स्टेशन आदि की गति-विधि चलाती हैं। इस मेज पर एक ही इन्जीनियर सभी नियन्त्रकों की देखभाल करता रहता है। मुख्य इमारत में जब त्वरण क्रिया चल रही हो तब वहाँ उपस्थित रहना अपनी जान को खतरे में डालना है। ये त्वरणयुक्त कण समस्त संसार के वातावरण के कण-कण में घुसने की शक्ति रखते हैं, इसलिए उनके हानिकारक प्रभाव से मनुष्यों और यन्त्रों को बचाने के लिए अत्यधिक सावधानी बरतनी पड़ती है।

अमरीका के सिंक्रोसाइक्लोट्रॉन

अमरीका में शिकागो यूनिवर्सिटी के सिंक्रोसाइक्लोस्ट्रॉन के चुम्बक के ध्रुवीय सिरे १७० इंच व्यास के हैं तथा इसके चुम्बकीय क्षेत्र की तीव्रता १८,६०० गौस है। इसमें प्रोटॉन को त्वरण देने के समय विभव की आवर्ति को २८·६ लाख चक्कर प्रति सेकण्ड से घटाते-घटाते १८ लाख चक्कर प्रति सेकण्ड तक कर देते हैं ताकि कणों की गति या ऊर्जा तथा प्रत्यावर्ती विभव में सामंजस्य बना रहे। इस मशीन से ४५० लाख इलेक्ट्रॉन वोल्ट ऊर्जा के प्रोटॉन कण, २६० इलेक्ट्रॉन वोल्ट के ड्यूट्रॉन तथा ४०० लाख इलेक्ट्रॉन वोल्ट ऊर्जा के एल्फाकण (हीलियम नाभिक) उत्पन्न किये जातें हैं।

संसार का सबसे बड़ा सिंक्रोसाइक्लोट्रॉन अमरीका की केलीफोर्निया यूनिवर्सिटी में स्थित है। इसके चुम्बक के ध्रुवीय सिरे १८४ इंच व्यास के हैं तथा यह चुम्बक २३,००० गौस का चुम्बकीय क्षेत्र तीव्रता उत्पन्न करता है। इस मशीन द्वारा ७४० लाख इलेक्ट्रॉन वोल्ट ऊर्जा के प्रोटॉन कण, ४६० लाख इलेक्ट्रॉन वोल्ट के ड्यूट्रॉन कण तथा ९१५ लाख इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा के एल्फाकण उत्पन्न किये जाते हैं।

रूस की प्रोटॉन-सिंक्रोट्रॉन मशीनें

रूस में मास्को के समीप वेक्सलर की प्रयोगशाला में आवेशयुक्त कणों का एक सबल एक्सीलरेटर बनाया गया है जिसको प्रोटॉन-सिंक्रोट्रॉन कहते हैं। इस मशीन से दस अरब इलेक्ट्रॉन वोल्ट की ऊर्जा के प्रोटॉन कण उत्पन्न किये जाते हैं।

इस मशीन के विद्युत चुम्बक का भार ३६,००० टन है तथा इसके चुम्बकीय ध्रुवों का व्यास लगभग ७० मीटर है। विशेष चुम्बकों और विद्युत आवेशयुक्त प्लेटों की रचना में प्रोटॉन कण मशीन के कक्ष के भीतर ३·३ सेकण्ड में ४५ लाख बार चक्कर लगा लेते हैं। इन कणों द्वारा तै की गयी यह दूरी हमारी पृथ्वी और चन्द्रमा के बीच की दूरी की लगभग ढाई गुनी अधिक होती है।

प्रोटॉन कण मशीन के कक्ष में अपनी घूर्णिमान यात्रा पूरी कर लेने के बाद एक आठ मीटर चौड़ी कंकरीट की दीवार में से एक बहुत तंग रास्ते से बाहर निकाले जाते हैं और प्रयोगशाला के उस प्रकोष्ठ में पहुँचा दिये जाते हैं जिसमें पदार्थ विज्ञान शोध के अनेक उपकरण होते हैं। अब इन त्वरण प्राप्त प्रोटॉन कणों की बमवर्षा विशेष प्रकार की प्लेट-लक्ष्य पर होती है तब उस लक्ष्य के द्रव्य के नाभिक स्फोट करते हैं और मेसॉन, न्यूट्रॉन, हाइपेरॉन, हाइपेर-खंड और एन्टी-प्रोटॉन आदि मौलिक सूक्ष्मातिसूक्ष्म कण उत्पन्न कर देते हैं।

अमरीका के प्रोट्रॉन-सिंक्रोटॉन

केलीफोर्निया यूनिवर्सिटी में बनायी गयी बीटाट्रॉन मशीन से ६·५ अरब इलेक्ट्रॉन वोल्ट की ऊर्जा के प्रोटॉन कण उत्पन्न किये जाते हैं। इतनी विशाल ऊर्जा के प्रोटॉन कण तैयार करने की आवश्यकता इसलिए होती है ताकि लक्ष्य पर इन प्रोटॉन कणों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की बमवर्षा से एण्टीप्रोटॉन कण भी सफलता-पूर्वक तैयार किये जा सकें।

अमरीका की ब्रुकहेवन राष्ट्रीय प्रयोग-शाला में निर्मित कोस्मोट्रॉन मशीन से २·९ अरब इलेक्ट्रॉन वोल्ट की ऊर्जा के प्रोटॉन कण तैयार होते हैं। इसी प्रयोगशाला में संसार की सबसे विशाल मशीन तैयार की जा रही है जो २५ अरब इलेक्ट्रॉन वोल्ट की ऊर्जा के प्रोटॉन कण तैयार कर सकेगी।

इलेक्ट्रॉन-सिंक्रोट्रॉन भी क्षेत्र में

प्रोटॉन-सिंक्रोट्रॉन मशीनों की भाँति इलेक्ट्रॉन-सिंक्रोट्रॉन भी तैयार किये गये हैं जिनसे उच्च ऊर्जा के इलेक्ट्रॉन कण तैयार किये जाते हैं। इन मशीनों द्वारा बीटाट्रॉन मशीनों की अपेक्षा अधिक ऊर्जा के इलेक्ट्रॉन कण उत्पन्न किये जा सकते हैं।

अन्तरिक्ष किरणों के पुनर्निर्माण की अद्भुत देन

वास्तव में विज्ञान और इन्जीनियरिंग की ये सब अद्भुत उपलब्धियाँ हैं। ऐसे प्रचंड ऊर्जा वाले एक्सीलरेटरों की सफल रचना का पहले शायद ही किसी को कोई अनुमान होता होगा। इन मशीनों के द्वारा वैज्ञानिकों को नाभिक शक्तियों के बारे में और मौलिक सूक्ष्मातिसूक्ष्म द्रव्य कणों के बारे में निश्चित रूप से नये रहस्यों का पता चलेगा। यही कारण है कि वह ऊँची से ऊँची ऊर्जा वाले कणों को प्राप्त करने का सदैव प्रयत्न करते रहते हैं ताकि द्रव्य की रचना की स्पष्ट और विवरणयुक्त कल्पना का ज्ञान तथा उसके भीतरी गहन की प्रक्रियाओं का ठीक विश्लेषण हो सके।

इन मशीनों द्वारा अब वैज्ञानिकों के अन्तरिक्ष किरणों के पुनर्निर्माण करने के अधिकांश स्वप्न सफल होते जा रहे हैं। मनुष्य अभी इतनी ऊँची ऊर्जा उत्पन्न नहीं कर पाया है जितनी प्रकृति स्वयं अन्तरिक्ष किरणों के रूप में पृथ्वी की ओर भेज देती है।

केलीफोर्निया विश्वविद्यालय का यह सिंक्रोट्रॉन यन्त्र इलेक्ट्रॉन के बदले प्रोटॉन का प्रयोग करता है

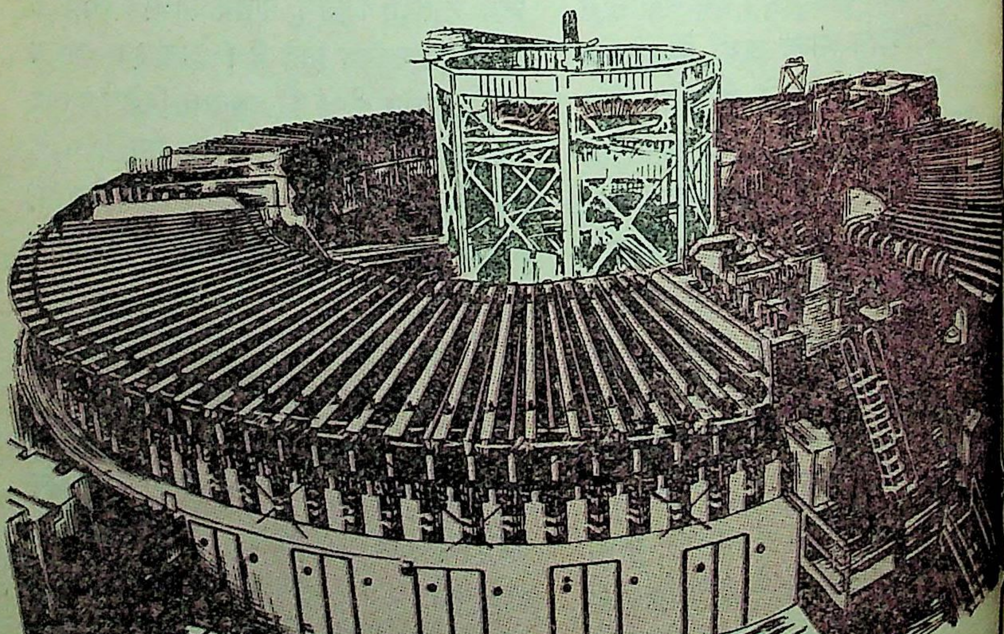

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेन्टाइगो रेमन केजेल

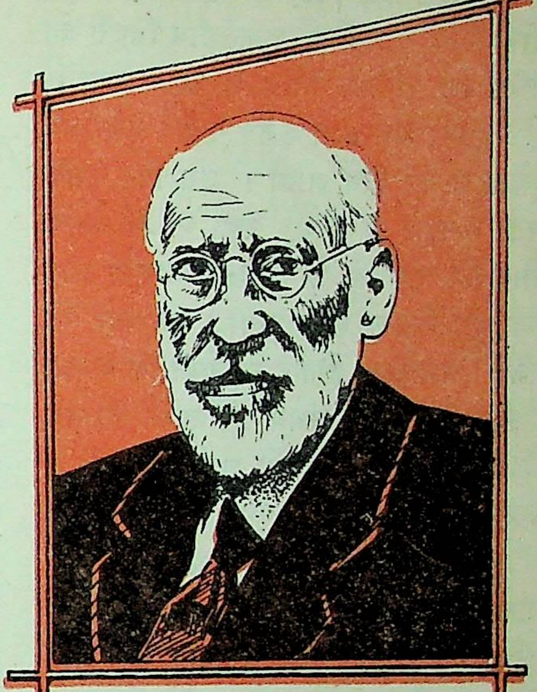

कुमारी रेखा सरीन

सेन्टाइगो रेमन केजेल (Santiago Ramon Cajal) परिस्थितियों से विवश होकर १० वर्ष की अवस्था में ही बाल-अपराधियों का अगुआ बनकर सिपाहियों से घिरा हुआ जेल की ओर चल दिया। उस समय किसी को यह कल्पना भी न होगी कि वह आवारा बालक विज्ञान-जगत में नाम चमका देगा। उस जेलयात्रा के ठीक ४० वर्ष बाद तंत्रिका-संस्थान की रचना पर किये अनुसन्धान के उपलक्ष्य में केजेल को नोबेल पुरस्कार मिला!

बाल्यकाल

पेटिला-डी-आरेगन (Petilla de Aragon) में १ मई, १८५२ को केजेल का जन्म हुआ। बालक केजेल की शिक्षा-दीक्षा चार वर्ष की आयु से ही प्रारम्भ कर दी गयी। केजेल ने शीघ्र ही अपनी कुशाग्र बुद्धि का परिचय दिया और छः वर्ष का होते-होते उसने स्पेनिश के अतिरिक्त फ्रेंच, भूगोल और गणित में भी दक्षता प्राप्त कर ली। तभी इसके पिता ने वाल्पालमास (Valpalmas) के शहर में अच्छी आजीविका का साधन प्राप्त कर लिया और परिवार सहित वहीं जम गये। वहाँ थोड़े ही समयान्तर से दो घटनाओं ने केजेल को अत्यधिक प्रभावित किया। उन्हीं घटनाओं ने इसकी जीवनधारा को अप्रत्याशित मोड़ दे दिया।

पहली घटना जब घटी तब बालक केजेल विज्ञान से सर्वथा अपरिचित था। जिस चर्च में केजेल पढ़ने जाता था, उसे एक दिन वर्षा, बादल और बिजली ने भयंकर रूप से घेर लिया। उस घनघोर वर्षा में बच्चों को घर जाने से रोकने के लिए चर्च का पादरी ऊँची मीनार पर चढ़ गया और जोरों से घण्टा बजाने लगा। तभी एक कर्णभेदी कड़क और जोर का धमाका हुआ। गहरे धुन्ध और धुएँ में केजेल ने देखा कि पादरी का झुलसा हुआ मृत शरीर अधटूटी शहतीर और चर्च के मलबे से चिपका पड़ा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। आग की लपटों से ध्वस्त होते हुए मीनार ने उस दिन आकाशीय विद्युत की शक्ति का परिचय केजेल को करा दिया।

दूसरा चमत्कार केजेल ने तब देखा जब सूर्यग्रहण का दिन आया। उस दिन उसके पिता ने पहले ही से कह रखा था कि अमुक समय पर सूर्य का बिम्ब छिप जाएगा और कब पुनः निकल भी आएगा। इस बार भी केजेल चमत्कृत होकर रह गया कि मनुष्य के लिए यह कैसे संभव हो सका जो सूर्य की गति के बारे में इतना शुद्ध पूर्व-अनुमान लगा ले।

केजेल परिवार को कुछ समय के लिए वाल्पाल्मास छोड़कर एयरबे (Ayerbe) नामक ऐसे विचित्र गाँव में रहना पड़ा जहाँ की भाषा इनके लिए और इनकी भाषा वहाँ के निवासियों के लिए दुरूह थी। वहाँ के लोग बहुत ही पिछड़े हुए तथा असभ्य थे। केजेल का अच्छा खाना, पीना और पहनना उन्हें पसंद नहीं था। वहाँ के किशोर लड़कों का यही प्रयत्न रहता था कि बालक केजेल भी उन्हीं की तरह आवारागर्दी में शामिल हो जाए। विवशतः केजेल उनके गुट में मिला और अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से उनका नेतृत्व करने लगा। उसी दौरान में एक कोठी का ताला तोड़ने का नेतृत्व करते हुए केजेल पकड़ा गया था। तभी उसे प्रथम बार और अन्तिम बार जेल जाना पड़ा था।

पाप-नगरी से छुटकारा और ज्ञानार्जन

शीघ्र ही उस जहरीले वातावरण से केजेल को छुटकारा मिल गया। उसके पिता ने अपना लक्ष्य बना लिया कि जिन शैक्षणिक सुविधाओं से स्वयं उन्हें अपने विद्यार्थी जीवन में वंचित रहना पड़ा था, वे समस्त बालक केजेल को अवश्य मिलें। केजेल अपने अवकाश का उपयोग ज्ञानवर्द्धन में करता रहा। प्रत्येक संभव स्थल से रंग-बिरंगे फूलों का संग्रह करके उनका सूक्ष्म अध्ययन करता रहा और उसने एक उपयोगी संकलन भी तैयार कर लिया। विभिन्न पक्षियों के अण्डे एकत्र करके उनका भी अवलोकन किया।

शीघ्र ही केजेल ने भौतिकी, रसायन और जीव-विज्ञान में दक्षता प्राप्त करके अपने सम्पर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति को चकित कर दिया, अपने पिता को विशेषतः प्रभावित किया। मानव शरीर की रचना के अध्ययन में वह अपने पिता को बहुमूल्य सहयोग देता रहा। पिता-पुत्र दोनों ही रात को कब्रिस्तान में पड़े हड्डियों के ढेर में से मानव अस्थियाँ बोरों में भर लाते थे। १८ वर्ष की आयु में ही केजेल ने मानव कंकाल का ऐसा चित्र-संग्रह तैयार किया जो तत्कालीन समस्त ग्रन्थों में प्रकाशित चित्रों से उत्तम और उच्चस्तरीय माना गया।

प्रतिभा की धाक

जारागोजा (Zaragoza) यूनिवर्सिटी में केजेल ने, जहाँ वह अध्ययन कर रहा था, अपनी प्रतिभा की धाक हर छोटे-बड़े पर जमा रखी थी। वहाँ केजेल को नीचा दिखाने के लिए एक अति कठिन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। केजेल ने जब उसमें अपने प्रतिद्वन्द्वी को हरा दिया तो द्वेषभरे अधिकारी यह आरोप लगाने लगे कि—'निश्चय ही इसने नकल की होगी, अन्यथा सर्वशुद्ध हल लिखना किसी विद्यार्थी के लिए तो क्या, अध्यापक तक के लिए असम्भव है।' इससे क्षुब्ध होकर केजेल ने प्रतियोगिताओं में भाग लेना ही छोड़ दिया।

चिकित्सा-विज्ञान में पूर्ण दक्षता प्राप्त करने के पश्चात् केजेल कुछ समय क्यूबा के युद्ध मोर्चे पर भी रहे। वहाँ का जलवायु इन्हें अनुकूल न आया और वे बीमार हो गये। बीमारी के कारण वे वहाँ से लौट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आये और पिता की कुशल देख-रेख में शीघ्र ही इन्होंने स्वास्थ्य लाभ कर लिया।

स्वस्थ होने पर जारागोजा यूनिवर्सिटी ने इन्हें शरीरशास्त्र का अध्यापक नियुक्त कर लिया। वहाँ इन्हें अपने अध्ययन की भी सुविधा मिलने लगी। सूक्ष्मदर्शी की सुविधा उनमें प्रमुख थी। सूक्ष्मदर्शी उन दिनों अधिक प्रचलित न थे। अपनी स्लाइड को उसके नीचे रखे हुए वे उसमें घण्टों डूबे रहते थे। एक बार तो लगातार २० घण्टे तक अध्ययन करते रहे थे!

२८ वर्ष की आयु में इन्होंने कु. डोना ग्रेशिया (Dona Gracia) से विवाह किया और लेखन कार्य प्रारम्भ किया। आरम्भ में स्पेन का विज्ञान-जगत इनकी ओर से काफी उदासीन रहा और इनकी अनेक उतम रचनाओं के बावजूद भी इनकी ओर ध्यान नहीं दिया। तब केजेल विदेशी पत्र-पत्रिकाओं में अपने विचारों का आदान-प्रदान करने में लग गये। उन्हें यह जानने की उत्कण्ठा रहती थी कि देश से बाहर विज्ञान-जगत में क्या हो रहा है। उपास्थि (cartilege) नेत्र-लेन्स तथा पेशी-तन्तुओं की संरचनाओं पर इनकी लेखन-कृतियों की अनेक पत्रों में प्रशंसा होती रही। इनकी Manual of Normal Histology and Micrographic Techniques की बहुत प्रशंसा हुई।

हैजा और भ्रम-निवारण

उन्हीं दिनों हैजा फैलने से अध्ययन का एक नया सूत्र केजेल के हाथ लगा। उन्होंने देखा कि डा. फेरान (Ferran) नामक एक चिकित्सक अपनी पुरातन प्रथा के अनुसार जीवित बैक्टीरिया के इन्जेक्शन देकर मनुष्यों को हैजे से सुरक्षित रखते थे। केजेल के अनुसार वह एक भ्रम मात्र था और यह निश्चित नहीं कहा जा सकता था कि वे बैक्टीरिया मनुष्य में रोग-निरोधक शक्तियाँ उत्पन्न कर ही दें। डा. फेरान जन्तुओं पर किये गये अपने ऐसे प्रयोगों को मनुष्यों के लिए भी प्रभावयुक्त सिद्ध करना चाहते थे किन्तु केजेल ने सिद्ध कर दिया कि वह विधि काफी त्रुटिपूर्ण थी!

शीघ्र ही बार्सिलोना विश्वविद्यालय के ऊतक-विज्ञान (histology) विभाग में एक महत्त्वपूर्ण पद पर केजेल की नियुक्ति हो गयी। वहाँ इन्होंने तन्त्रिका-संस्थान का तलस्पर्शी अध्ययन किया। इस क्षेत्र में मस्तिष्क का सूक्ष्मदर्शी अध्ययन करने के लिए एक असुविधा यह थी कि तन्तुओं को रंजित करने के लिए कोई सफल साधन नहीं बन पाया था। गोलगाई (Golgi) नामक वैज्ञानिक का पोटैशियम बाइक्रोमेट और सिलवर नाइट्रेट का प्रचलित फार्मूला भी प्रायः निष्प्रभाव हो जाता था। केजेल ने यह परीक्षण भ्रूणावस्था के मस्तिष्क पर ही कर लेने का परामर्श देकर इस कठिन समस्या का हल प्रस्तुत किया।

निराशा को कोई स्थान नहीं

तंत्रिका-संस्थान की संरचना पर प्रमुख विद्वानों में जो चर्चा-विवाद चल रहे थे उनमें केजेल के विद्वत्तापूर्ण अभिमत को न तो किसी ने सराहा और न इनके प्रमाणभूत प्रयोगों पर ही कोई ध्यान दिया। पर इससे केजेल निराश न हुए और बर्लिन में आयोजित शरीर-विज्ञान के अधिवेशन में सम्मिलित होकर इन्होंने वहाँ के प्रसिद्ध डा. कोलिकर (Kolliker) को पूर्णतः प्रभावित कर दिया। डा. कोलिकर को अपनी स्थापित अनेक मान्यताएँ बदल देनी पड़ीं।

डा. कोलिकर से प्रोत्साहन पाकर केजेल ने मस्तिष्क अनुसंधान कार्यों में अपनी उपलब्धियों से विज्ञान-जगत को आश्चर्य में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डाल दिया । स्पेन की राजधानी मैड्रिड की ऊतक-अनुसंधानशाला ने तथा लन्दन की रायल सोसाइटी ने आपको सम्मानित किया । इसके अतिरिक्त स्पेन-अमरीकी युद्ध समाप्त न होने पर भी इस स्पेनिश केजेल को अमरीका ने ससम्मान निमन्त्रित किया ।

केजेल के जीवन में १९०६ स्वर्ण-वर्ष था जब कि ४० वर्ष पूर्व का बाल-अपराधी और जेलयात्री केजेल, अपने कट्टर प्रतिद्वन्द्वी वैज्ञानिक गोलगाई से हाथ मिलाकर सम्मिलित रूप में नोबेल पुरस्कार-प्रेषकों के सम्मुख उपस्थित हुआ ।

केजेल ने अनुसंधान कार्य को एक क्षण के लिए भी न छोड़ा । मस्तिष्क और तंत्रिका-संस्थान विषयक इनके अनुसंधान कार्य आज इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी के युग में और भी महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो रहे हैं । उनके जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि यही मानी जाती है कि एक समय के उपेक्षित और महत्त्व से शून्य स्पेन को सेन्टाइगो केजेल ने विज्ञान-जगत में महत्त्वपूर्ण स्थान दिलाया । ●

खेल-खिलवाड़ भरा पौपस

[पृष्ठ १८ का शेष]

इन लक्षणों से ये प्रश्न उभरने लगे हैं कि क्या पौपस को एक पनडुब्बी की भाँति शत्रु-जहाजों के पेंदे में बम-विस्फोट कराने के लिए भी प्रशिक्षित किया जा सकता है ? अमरीका के प्रसिद्ध संस्थान नासा (NASA—National Aeronautics & Space Administration) के अधिकारियों को इस बारे में काफी आशा है । विगत १० वर्ष के प्रयोगों ने उनकी इस आशा को बल भी दिया है ।

एक अन्य उदाहरण में पौपस का सहकारी कार्य भी देखने में आया । दो पौपस एक ईल मछली का पीछा कर रहे थे और उसे घेर लेने की कोशिश में थे । ईल जान छुड़ाकर एक ऐसी दरार में जा छिपी जिसमें वे प्रवेश नहीं कर सकते थे । तब एक पौपस तो पहरे पर खड़ा रहा और दूसरा डंक मारने वाली एक मछली को पकड़ लाया । उसके विषैले डंक से उन्होंने ईल को तिलमिला दिया और आखिर उसे खींचकर निकाल लिया ।

इन लक्षणों से जीव-शास्त्रियों ने अनुमान लगाया है कि इसकी मस्तिष्क-रचना में अवश्य कुछ विशेषता होनी चाहिए । अत: एक पौपस के मस्तिष्क की शल्य-परीक्षा द्वारा उन्होंने इसका समर्थन पा लिया है । उन्होंने ज्ञात किया है कि पौपस के मस्तिष्क में प्रमस्तिष्क (cerebrum) का भाग अधिक है और वही इसके उच्च बौद्धिक विकास का कारण है । एक अन्य प्रयोग-स्वरूप एक जीवित पौपस के मस्तिष्क में कुछेक विद्युदाग्र उतारकर देखा गया कि जब-जब वे विद्युदाग्र उसके उल्लास-केन्द्रों को छूते थे, तब-तब वह किसी भी कार्य के लिए सरलतापूर्वक प्रशिक्षित किया जा सकता था ।

सम्भव है भविष्य में पौपस भी पालतू जन्तुओं में अपना अग्र स्थान बना ले । ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियाँ

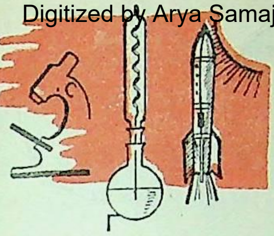

बगैर सड़क खोदे, पाइप-लीकेज की जाँच

बड़े शहरों में भूमिगत पाइपों का जाल बिछा रहता है। कभी पानी का तो कभी गैस का पाइप कहाँ से लीक कर रहा है, यह देखने के लिए भी सड़क को स्थान-स्थान पर खोदना पड़ता है। इस परेशानी से बचने के लिए इन्स्टीट्यूट आफ टेकनालाजी ने एक ऐसा ध्वनि निरीक्षक बनाया है जो सड़क के ऊपर से ही ध्वनि-परीक्षण द्वारा लीकेज का ठीक स्थान बता देता है। इस यंत्र को एक कार में फिट करके चाहे जहाँ ले जाया जा सकता है।

कैंसर चिकित्सा की नवीन विधि

शिकागो विश्वविद्यालय के चिकित्सकों ने नारी-वक्ष के कैन्सर का इलाज करने के लिए अनेक सफल प्रयोग किये हैं। कैन्सर वक्ष का हो अथवा अन्य किसी अंग का, हारमोन्स दिये जाने पर उलटे और बढ़ता है। इन चिकित्सकों ने प्रतिदिन दो के हिसाब से दोहरे प्रजनन हारमोन्स के इंजेक्शन देकर १५ महिला मरीजों में से ९ को कैन्सर-मुक्त कर दिखाया है। इस नवीन चिकित्सा के श्रेय के भागी हैं—डा. रिचार्ड, डा. एलरिक और डा. चार्ल्स हगिन्स।

पाँच टन का कोमल हथौड़ा

एक अण्डे को चुटकी में चटकाया जाए उससे भी अधिक कोमलतापूर्वक इस पाँच टन वजनी हथौड़े से इस प्रकार चटकाया जा सकता है कि केवल उसका खोल चटक-कर रह जाए और अण्डा कुचलने न पाए। एडिनबर्ग के जेम्स नेस्मिथ ने जो वाष्प-चालित, पाँच टन का वजनी हथौड़ा तैयार किया है, उससे कड़ी से कड़ी और मोटी से मोटी धातु एक ही चोट में चूर-चूर हो जाती है। उसके प्रथम प्रदर्शन के अवसर पर चोट के साथ जो धमाका हुआ था, उससे अनेक व्यक्ति बेहोश हो गये थे फिर भी उसका नियन्त्रण इतना विलक्षण है कि शीशे के ग्लास में आधा फँसाया हुआ अण्डा कोमल दाब से खोल तक ही चटककर रह गया था!

समुद्री जीवों के लिए नयी मुसीबत

सी-बबल (Sea Bubble) अर्थात् समुद्री-बुलबुला नामक इस यान में यह सुविधा है कि इसमें चारों ओर का दृश्य स्पष्ट देखा जा सकता है। इसमें तीन व्यक्ति आराम से बैठ सकते हैं। पर्सपेक्स (perspex) नामक नयी वस्तु से बना यह यान काफी देर तक गहराई में ठहरा रहकर आवश्यक अध्ययन की सुविधा प्रदान करता है। इसमें लगे छोटे-छोटे जेट इंजनों से इसके संचालन में पर्याप्त सरलता रहती है। बड़े समुद्री जीव भी इसे तोड़-फोड़ नहीं सकते।

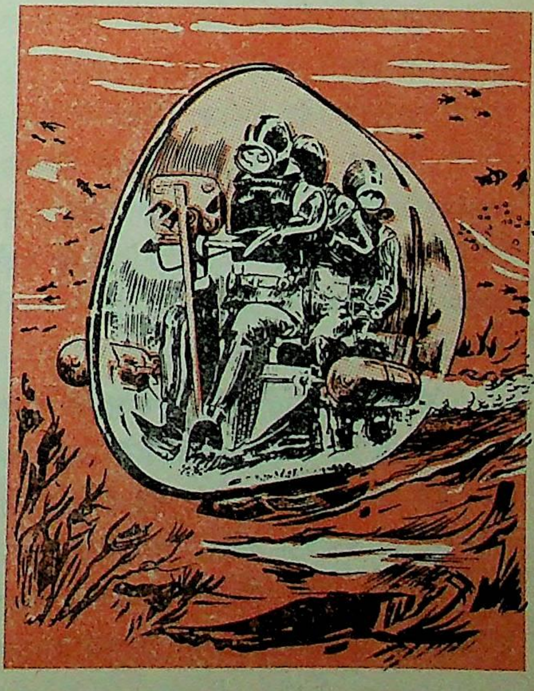

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

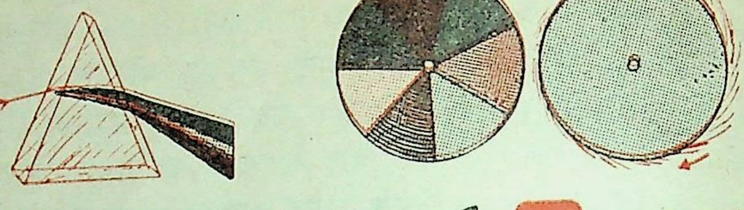

रंगीन प्रकाश की अनुभूति

सुरेन्द्रकुमार सक्सेना

प्राचीन काल से ही मनुष्य को रंगों की जानकारी रही है। उस समय भी वह रंगों का उपयोग वस्तुओं की सजावट में करता था। रंगीन प्रकाश की वास्तविक जानकारी सर्वप्रथम न्यूटन ने ही सन् १६६६ में की थी। उसने प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध किया कि सूर्य का श्वेत प्रकाश वास्तव में सात रंगों से मिलकर बना हुआ है। यही नहीं, न्यूटन ने इस बात का भी समाधान किया कि वस्तुएँ रंगीन क्यों दिखती हैं। उसने वस्तुओं के रंगीन दिखने के इन्द्रधनुषी नियम को प्रस्तुत किया जिसके अनुसार वस्तु या तो इन्द्रधनुषी रंग में से किसी एक रंग की अनुभूति देती है या उनके सम्मिलित रंग की।

नेत्रों को रंग की अनुभूति

रंग की अनुभूति और प्रकाश के तरंग दैर्ध्य में परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। सूर्य के श्वेत प्रकाश से प्राप्त वर्णपट को सफेद परदे पर लेने से क्रमशः लाल, नारंगी, पीला हरा, नीला, आसमानी और बैंगनी सात रंग मिलते हैं जिनकी अपनी अलग-अलग तरंगदैर्ध्य होती है। ये रंग इन्द्रधनुषी रंग कहलाते हैं। स्पष्ट है कि नेत्र में जिस तरंगदैर्ध्य का प्रकाश पहले प्रवेश करेगा उस रंग का प्रथम अनुभव होगा—ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार अधिक आवृत्ति वाली ध्वनि-तरंग हमारे कान को ऊँचे स्वर की अनुभूति कराती है और कम आवृत्तिवाली ध्वनि से नीचा स्वर सुनाई पड़ता है।

नेत्र में रंग की अनुभूति के सम्बन्ध में सन्तोषजनक व्याख्या हेल्स हाल्टस तथा मैक्सवेल ने दी थी। उनके अनुसार नेत्र में तीन प्रकार के शिरा-तन्तु होते हैं जो क्रमशः लाल, हरे तथा बैंगनी रंग की अनुभूति पैदा करते हैं। ये ही तीनों रंग प्राथमिक रंग कहलाते हैं। इन तीनों अनुभूतियों की आपेक्षिक तीव्रता ही यह बताती है कि सम्मिलित अनुभूति किस शेड के रंग की होगी। यदि तीनों की तीव्रता बराबर है तो श्वेत रंग की अनुभूति होती है। तीनों रंगों की अनुभूति कराने वाले शिरा तन्तुओं को विभिन्न परिमाण में उत्तेजित करके इच्छा-नुसार किसी भी रंग का प्रकाश आँखों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामने प्रस्तुत किया जा सकता है। इस निष्कर्ष का प्रदर्शन प्रयोग द्वारा इस प्रकार किया जा सकता है—सफेद परदे के एक ही भाग पर तीन प्रक्षेपी लालटेनों से क्रमशः लाल, हरा और बैंगनी प्रकाश डालें और इन प्रकाशों की तीव्रता इच्छानुसार घटायें-बढ़ायें तो परदे के इस भाग पर पड़ने वाले प्रकाश को जिस रंग का चाहें, वैसा ही बना सकते हैं। यदि तीनों की तीव्रता बराबर रखी जाए तो श्वेत प्रकाश का धब्बा परदे पर मिलेगा।

वस्तुएँ किस रंग की दिखती हैं

कुछ वस्तुएँ स्वयं प्रकाश उत्पन्न करती हैं। उनमें विभिन्न तरंग-दैर्ध्य वाले प्रकाश विभिन्न तीव्रता में मौजूद रहते हैं। इस प्रकार निकले हुए प्रकाश ही नेत्र के प्राथमिक रंग-चेतना वाले शिरातन्तु को उत्तेजित करते हैं जिसके फलस्वरूप रंग की अनुभूति होती है। उदाहरण के लिए भट्ठी से निकला हुआ तप्त लोहा, लालटेन की लौ, विद्युत चिनगारी आदि इसी श्रेणी में आती हैं।

यहाँ यह बात समझ लेना आवश्यक है कि प्रदीप्त वस्तु के रंग को देखकर यह नहीं बताया जा सकता कि वह रंग प्रदीप्त वस्तु से निकले किसी एक वर्ण प्रकाश के कारण है, या कई वर्णों के मिश्रण का नतीजा है। उदाहरण के लिए गैस लैम्प की लौ पीले रंग की दिखती है, किन्तु वर्णक्रममापी द्वारा उसमें सूर्य वर्णक्रम के सभी अवयव मौजूद पाये जाते हैं। केवल नीला और बैंगनी प्रकाश नहीं होता। उसे हम नीला और बैंगनी रहित श्वेत प्रकाश कह सकते हैं। इसके विपरीत सोडियम लैम्प का प्रकाश भी पीला दिखता है और उसके वर्णक्रम विश्लेषण से पता चलता है कि उसमें विशुद्ध पीला-वर्ण प्रकाश ही मौजूद रहता है।

दूसरी वस्तुएँ वे हैं जो स्वयं तो प्रकाश उत्पन्न नहीं करतीं परन्तु उनके रंग की अनुभूति उन पर बाहरी प्रकाश के पड़ने से होती है। उन वस्तुओं के रंग की अनुभूति दो बातों पर निर्भर करती है—एक उस पर पड़ने वाले प्रकाश की किस्म पर तथा दूसरे इस बात पर कि वह वस्तु पड़ने वाले प्रकाश के किन वर्णों को परावर्तित करती है, किन्हें अपने में से गुजरने देती है तथा अपने अन्दर किन वर्णों को शोषित कर लेती है।

जिन वस्तुओं के आरपार हम देख नहीं सकते उन वस्तुओं का रंग प्रकाश की उन तरंगों द्वारा निर्धारित होता है जो उनसे परावर्तित होकर हमारी आँखों में पहुँचती हैं। दिन के प्रकाश में सफेद कागज हमें सफेद इसलिए दिखता है कि वह श्वेत प्रकाश में मौजूद सभी वर्णों के प्रकाश को समान रूप से परावर्तित करता है परन्तु जब सोडियम लैम्प से प्राप्त प्रकाश में रखा जाता है तो पीला दिखता है। ऐसा इसलिए होता है कि सोडियम के प्रकाश में केवल विशुद्ध पीले रंग का एकवर्ण प्रकाश ही मौजूद रहता है। अतः कागज केवल पीले रंग को परावर्तित कर पाता है जो हमारी आँखों में पहुँचकर पीले रंग का अनुभव कराता है।

इसी प्रकार हरे रंग की ऊन की लच्छी दिन के प्रकाश में हरी इसलिए दिखती है कि श्वेत प्रकाश के अन्य सभी वर्णों का शोषण करके यह केवल हरे वर्ण के प्रकाश को परावर्तित करती है। उसी लच्छी को यदि सूर्यप्रकाश के वर्णपट के विभिन्न भागों में रखें तो केवल हरे वर्ण वाले भाग में वह हरी दिखेगी और शेष भागों में काली दिखेगी। यह इसलिए कि उन भागों के प्रकाश को यह पूर्णतया अपने में शोषित कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेती है । पारे की वाष्प का लैम्प रात को यद्यपि दिन सरीखा प्रकाश देता है, फिर भी रंगों के शेड की सही पहचान उस प्रकाश में नहीं की जा सकती, क्योंकि उसके प्रकाश में लाल-वर्ण प्रकाश की तरंगें मौजूद ही नहीं होतीं ।

जिन वस्तुओं के आरपार हम देख सकते हैं, उनका रंग प्रकाश की उन तरंगों द्वारा व्यक्त होता है जो उन्हें पार करके दूसरी ओर आ जाता है । आपतित प्रकाश जब पारदर्शी पदार्थ में से गुजरता है तब प्रकाश के कुछ तरंग-दैर्ध्य के प्रकाश-वर्णों को वह अपने में अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में शोषित कर लेता है । उस पार निकलने वाले बचे हुए वर्णों के प्रकाश अपना मिश्रित प्रभाव आँखों पर डालते हैं और वस्तु के रंग की अनुभूति करते हैं । उदाहरण के लिए, गहरे नीले रंग के कोबाल्ट काँच पर जब सूर्य का प्रकाश पड़ता है तो यह पीले, नारंगी तथा लाल वर्ण वाले प्रकाशों को शोषित कर लेता है और उस पार केवल विशुद्ध हरा, नीला, तथा बैंगनी वर्ण का प्रकाश पहुँच पाता है । इनके मिश्रण के प्रभाव से आँखों को गहरे नीले रंग की अनुभूति होती है । इसकी जाँच के लिए यदि सूर्य के प्रकाश से प्राप्त वर्णपट के मार्ग में कोबाल्ट काँच को रखें तो परदे पर हम केवल वर्णक्रम का हरा, नीला तथा बैंगनी भाग ही पाएँगे । शेष भाग काँच में शोषित हो जाता है ।

कोई वस्तु अपनी वास्तविक अवस्था में जिस रंग की दिखती है उसे यदि चूर्ण कर दी जाए तो दूसरे रंग की दिखने लगे । उदाहरण के लिए, श्वेत प्रकाश में नीले-थोथे का क्रिस्टल नीले रंग का दिखता है, क्योंकि उसमें से गुजरकर आने वाले प्रकाश का लाल तथा पीला वर्ण क्रिस्टल द्वारा

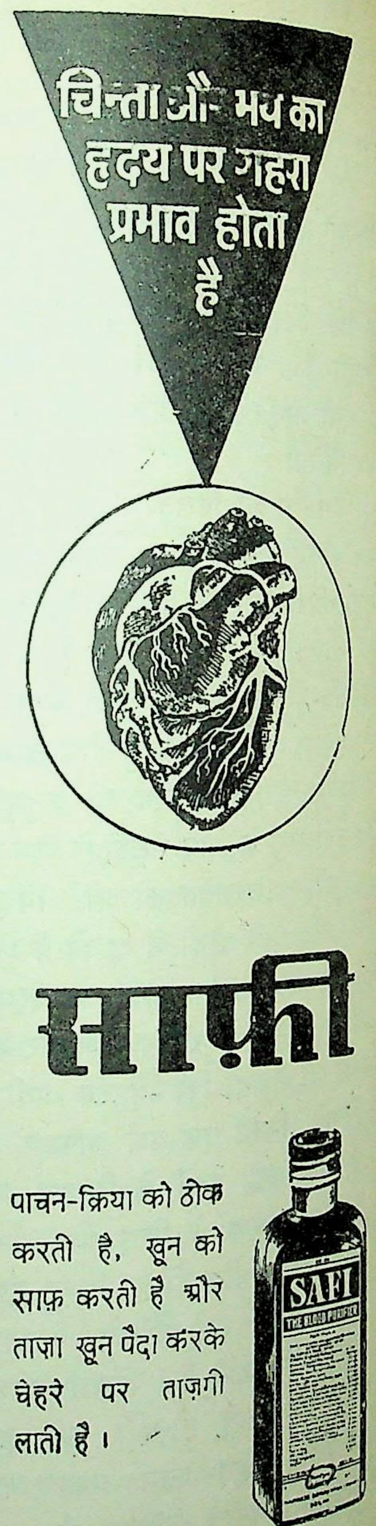

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

शोषित हो जाता है और बचा हुआ प्रकाश नीले रंग की अनुभूति देता है। यदि उस क्रिस्टल को पीसकर बारीक चूर्ण कर लिया जाए तो वह पीला और हलका नीला दिखेगा। ऐसा इसलिए होता है कि श्वेत प्रकाश चूर्ण की ढेरी में थोड़ा ही प्रवेश करने पर नन्हें-नन्हें टुकड़ों की सतह से परावर्तित हो जाता है। अतः पीले तथा नीले वर्ण का शोषण कम मात्रा में हो पाता है और ढेरी का रंग पीला और सफेदी लिए नीला दिखता है।

इस प्रकार रंग-हीन पारदर्शी पदार्थ जैसे काँच, बर्फ आदि को चूर्ण कर देने पर वे सफ़ेद दूधिया रंग के दिखते हैं। यह इसलिए कि श्वेत प्रकाश भीतर प्रवेश करते ही नन्हें वर्णों की सतह से परावर्तित होता है। उसमें श्वेत प्रकाश के वर्णक्रम के सभी रंग मौजूद रहते हैं तथा किसी भी वर्ण का प्रकाश शोषित नहीं हो पाता। अतः चूर्ण के रूप में ये चीजें सफेद दूधिया रंग की दिखती हैं।

मनुष्य में रंग-दोष

सभी मनुष्य संसार की चीजों को उनके वास्तविक रंग-रूप में नहीं देख पाते। जिन मनुष्यों की आँखों में रंग-दोष हो जाता है वे नीले तथा लाल रंग की पहचान करने में असमर्थ रहते हैं। इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध वैज्ञानिक जॉन डाल्टन की आँखों में रंग-दोष था। कई बार वे सार्वजनिक उत्सवों में चटकीले लाल रंग के सूट पहनकर चले गये थे—इस धोखे में कि उनके सूट का रंग गहरा नीला है।

अन्य जीवधारियों की दृष्टि में

पशु-पक्षी वस्तुओं को उसी रंग-रूप में नहीं देखते जैसे मनुष्य। पशु-पक्षियों तथा कीड़े-पतंगों की रंग पहचानने की क्षमता में भी विभिन्नताएँ हैं। इन्हें तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता है—एक, वे जो चीजों के रंग की पहचान नहीं कर पाते। उदाहरणार्थ कुत्ते, बिल्ली आदि के लिए बाह्य जगत रंग-हीन होता है। इन्हें संसार में सभी चीजें सफेद, भूरे और काले रंग की दिखती हैं। दूसरे, वे जिन्हें सभी रंग प्रायः एकसे ही दिखते हैं। मधुमक्खियों को सभी रंग प्रायः एकसे दिखते हैं। तीसरे, वे जो कुछ रंगों को पहचानने में समर्थ होते हैं और कुछ को नहीं। तितली लाल और सफेद रंग को विशेष रूप से पहचानने में समर्थ होती है। बन्दर प्रायः गहरे लाल, हरे तथा आसमानी रंग को पहचानते हैं।

पक्षियों में रंग पहचानने की क्षमता प्रचुर मात्रा में पायी जाती है। यही कारण है कि प्रकृति ने विभिन्न पक्षियों को रंग-बिरंगे चटकीले रंग प्रदान किये हैं। साधारणतया पक्षी लाल, गुलाबी, पीले और हरे रंग को बखूबी देख सकते हैं। नीला रंग इनको अच्छी तरह प्रभावित नहीं कर पाता तथा बैंगनी रंग को ये बिलकुल ही नहीं देख सकते। मछलियों के बारे में अभी किसी खास नतीजे पर नहीं पहुँचा जा सका है कि मछलियाँ रंग की पहचान करने में समर्थ होती हैं या नहीं। मेंढक रंगों की पहचान करने में पूर्ण असमर्थ है। ●

रेफ्रिजरेटर का जेबी संस्करण

कुल १५ ग्राम वजन का एक जेबी रेफ्रिजरेटर लेनिनग्राड की एक कम्पनी ने तैयार किया है। यह रेफ्रिजरेटर किसी भी वस्तु का ताप ५०-६० डिग्री से गिरा देता है और लम्बे समय तक वही शीत बनाये रखता है। वायु के फैलने पर उत्पन्न होने वाले शीत के सिद्धान्त पर बने हुए इस रेफ्रिजरेटर में बिजली की आवश्यकता नहीं है।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

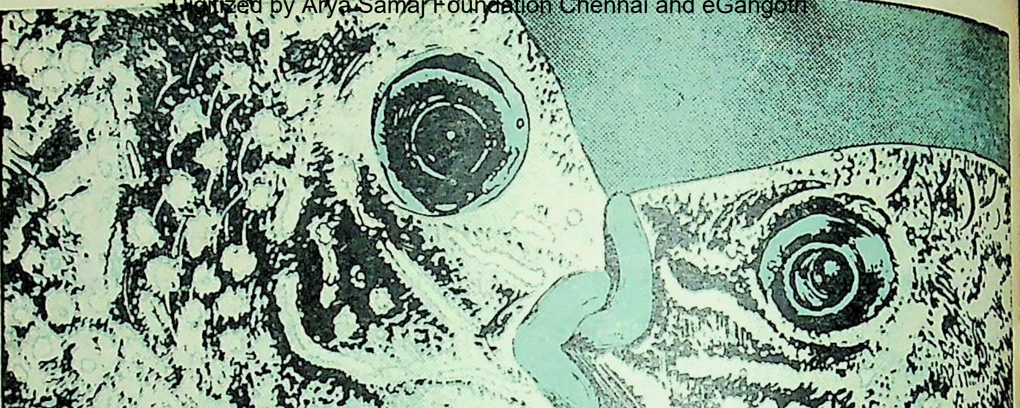

जगदीशप्रसाद अग्रवाल

[पूर्वार्द्ध में अनेक पक्षियों—काग-परिवार का विदेशी राजकुमार, स्वर्ग पक्षी, कबूतर, बगुला, मारकोनी पेंगुइन, मुर्गा, पेलिकन, सारस, पनकौआ और सुरखाब आदि की प्रणय-क्रियाओं का वर्णन है। प्रस्तुत अंक में तितली, झींगुर, जुगनू, केकड़ा, बिच्छू, मकड़ी, मछली, मेंढक, मोर, पपीहा, छिपकली, बिल्ली, बन्दर और खरगोश आदि की प्रणय-प्रेरणाओं का विवरण दिया गया है।]

[शेषांश]

कीटों के प्रणय-कौशल

अनेक कीटों में बाह्य रूप-रंग और निखार में नर और मादा में बड़ा अन्तर (sexual diamorphism) होता है। प्रकृति ने तितलियों और शलभों (परवानों) में रंगों की बहार इतने खुले दिल से सम्भवतः परस्पर आकर्षण के लिए ही लुटायी है। भंभीरी (dragon fly) और डेमजल मक्खी (damsel fly) में नाना प्रकार की वेशभूषा के परिधान का दान प्रकृति ने इसीलिए दिया है।

केटिटिड (katyctid), साइकडा (cicada), झींगुर और टिड्डे वह सुरीला सितार बजाते हैं कि हरित बाँस की बाँसुरी भी मुकाबला नहीं कर पाती। मादा इस प्रकार का संगीत उत्पन्न नहीं कर सकती। वातावरण में यह मीठी लहर मादा को रिझाने के लिए छोड़ी जाती है।

तितली फूल पर जाकर बैठती है पर उस फूल को ज्यादा पसन्द करती है जिसमें सुवास हो, माधुर्य हो और जिनकी पत्तियों पर रंग-बिरंगी छटा छायी हो। उसके आकर्षण के लिए ही तो फूल अपना शृंगार करता है! तेल और इत्र-फुलेल का भी अपना खिंचाव होता है।

जुगनू मादा अपनी कुटिया में प्यार का दीपक जलाये अपने प्रेमी की राह देखती रहती है। वह दीप क्या उसी के पेट का पिछला छोर मानो वियोग में जल रहा हो। उनके उपासक मन्थर गति से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी झोपड़ी की ओर खिंचे चले आते हैं।

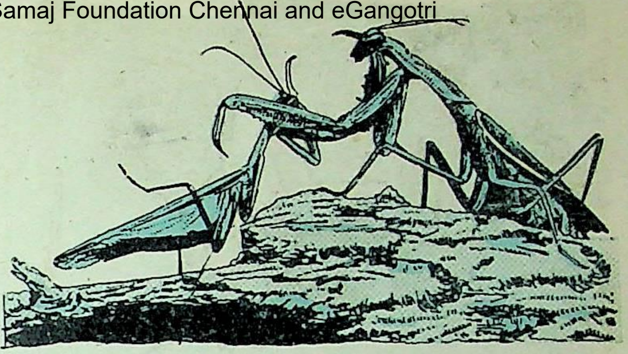

हिम्मत बटोर कर मादा के निकट पहुँचता है और मादा उसे अपने मजबूत पंजों से जकड़े रहती है

केकड़ा और बिच्छू

समुद्र निवासी एक कीड़ा (bristle worm) मादा की कुंडली में लिपटकर एक सिहरन पैदा करता है जिसके कारण वह अण्डे देने के लिए बाध्य हो जाती है। एक विशेष जाति का केकड़ा (fiddler crab) अपने अगले भारी हाथ (पंजे) को छोटी-सी मादा के हाथ के लिए आगे बढ़ाता है और उसके वरण का धैर्य से प्रतीक्षा करता रहता है। बिच्छू अपनी मादा को अगले दो पंजों से जकड़कर उसका आलिंगन करता है और फिर वे दोनों प्यार की राहों में टहलते हुए कुछ समय व्यतीत करते हैं। सुना जाता है कि मादा इतनी नृशंस होती है कि समागम के तुरन्त बाद अपने पति की हत्या कर देती है। रेशमी कपड़ों और लाइब्रेरी की अलमारियों में मिलने वाला छोटे आकार का डंकहीन बिच्छू (book scorpion) अपने शुक्राणुओं को नन्हीं-सी कटोरी, जो किसी घास-फूस या तिनके पर आराम से जमायी हुई होती है, में रखकर मादा की खोज में निकलता है। किसी भी सुन्दरी के मिलने पर उसे कटोरी तक आने के लिए मनाता है। अपने कार्य में सफल होने से पूर्व उसे कम से कम आधी दर्जन मादाओं की खुशामद करनी होती है।

मकड़ी, प्रेइंग मेन्टिस और स्पंज

मकड़ी की कोई ही ऐसी जाति हो जिसमें दोनों कुछ समय के लिए मेल-मिलाप से रहते हों। नर को इस प्यार की दुनिया में बड़ा सम्हलकर कदम रखना पड़ता है। वह अपनी अगली दोनों टाँगों से अपनी प्रियतमा को आने का इशारा करता है। कितना कौतूहलपूर्ण है वह दृश्य जबकि एक ओर तो वह अपने ऊटपटाँग नाचों से अपनी प्रेमिका को प्रेमपाश में बाँधने की कोशिश करता है और दूसरी ओर अपनी जान-बचाकर भाग निकलने के लिए प्रयत्नशील भी होता है। इस आँखमिचौनी के चक्कर में जरा भी पैर फिसला कि कर्कश मादा उसे अपने जहरीले पंजों से चीरकर रख देती है। कितने ही मकड़े जब इस प्रकार बलि का

पतंगों में प्रणय-संदेश ग्रहण करने की अद्भुत क्षमता होती है। मादा की गंध और नर के स्पर्श पंखों की तरंगें दोनों को दूर-दूर से निकट खींच लाती हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

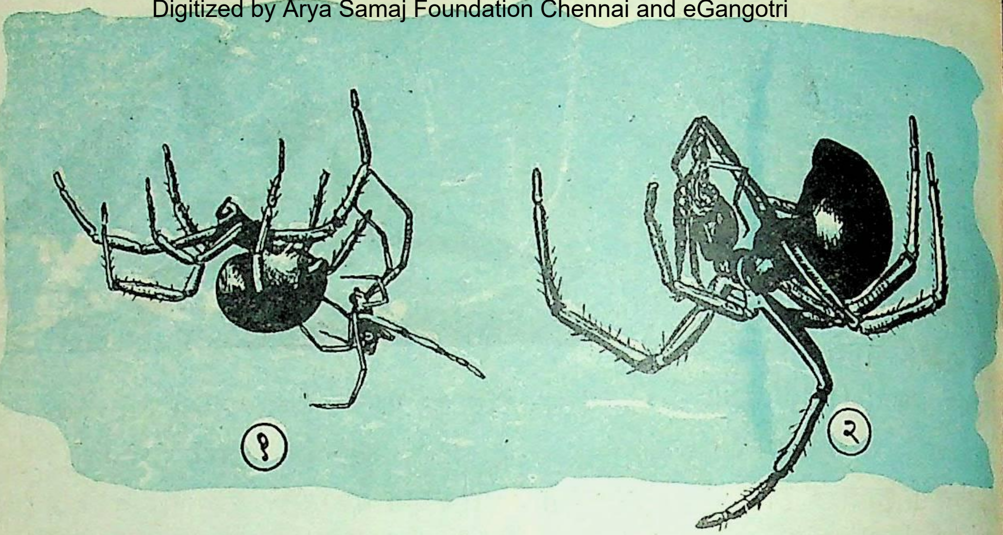

१. ब्लैक विडों (Black widon) जाति की मकड़ी का नन्हा नर अपनी विशालकाय मादा के निकट प्रणय आवेदन कर रहा है। २. रति क्रीडा के शीघ्र ही पश्चात् मादा नर को निगल रही है

बकरा वन चुकते हैं तो दम्भी दैत्य मकड़ी उनमें से एक का चुनाव कर लेती है और वह गरीब भी अपनी सुहागरात पूरी होने से पूर्व ही इस दुनिया से दूर चला जाता है।

प्रेइंग मेन्टिस (praying mantis) में मादा की भूख बड़ी प्रबल होती है। भोजन न मिलने की अवस्था में अपने साथियों और बच्चों को खा जाने के लिए यह कीट कुख्यात है। मादा तो समागम करते-करते अपनी कामाग्नि की पूर्ण-आहुति अपने पति महोदय को चट करके देती है।

केकड़े और लोबस्टर (lobster) में नर का शरीर रंग-बिरंगा और मोहक होता है। कई मछलियों में नर अपने चोइयों की चमक-दमक और भड़कीलेपन से मादा का मन मोह लेता है। इस स्वयंवर में प्रतियोगियों को छल-छद्म, चाटुकारी और समय पड़ने पर वीरता का सहारा लेना पड़ता है। मादा वरमाला सर्वसुन्दर नर को ही पहनाती है। वरण के पश्चात् नर के शरीर की सुन्दरता न जाने कहाँ चली जाती है और दूल्हे का शरीर भी साधारण मछलियों जैसा हो जाता है।

फूल दान स्पंज (vase sponge) में श्रिम्प (shrimp—एक सन्धि पाद जन्तु) का जोड़ा एक स्पंज में आकर रहने लग जाता है। एक बार साथ हो जाने के

केकड़े हों, कीड़े-मकोड़े हों या बिच्छू, प्रणय-ताप से सभी आक्रान्त हो उठते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

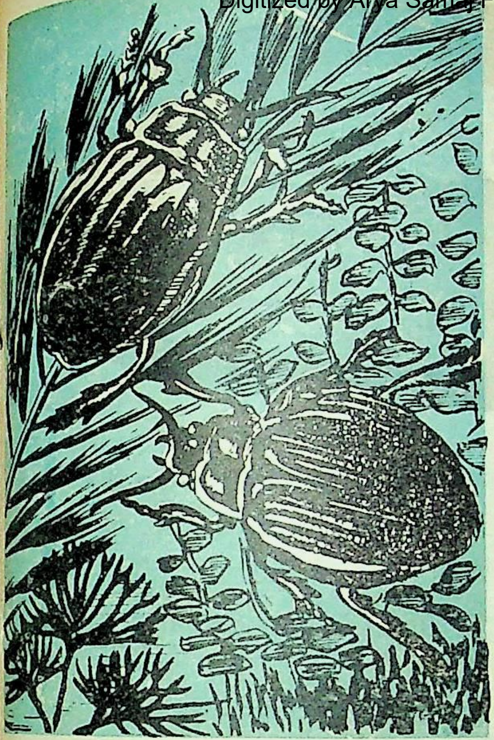

वे गुबरीले कीट भी ऋतुकाल में प्रणयावेशित हो जाते हैं

पश्चात् वे कभी भी एक-दूसरे से नहीं बिछुड़ते। जापान में 'चिरजीवै जोड़ी जुरै' के प्रतीक इस स्पंज को विवाह में दहेज के रूप में दिया जाता है। बोनिला (bonella) में नर बेचारा अपना जीवन ही मादा के आश्रय पर बिताता है।

रति-रत मछलियां

एक मछली (goby-waxes) सम्भोग के समय विद्रोही हो उठती है। सालमन (salmon) में नर में प्रजनन काल में जबड़े से एक काँटे की तरह का अंग उभर आता है जिसका प्रयोग मादा को तनिक भी अवहेलना करने पर डराने के लिए होता है। सभी मछलियों में कामोद्दीपन स्वाभाविक संवेदना से होता है और [illegible] की तरह सम्भवतः यह उसकी अपनी इच्छा पर निर्भर नहीं होता। कई मछलियों में नर मादा द्वारा प्रेम निवेदन की स्वीकृति पर इतना आत्म-विभोर हो जाता है कि प्रसव का आंशिक भार सहर्ष अपने ऊपर ले लेता है। हिपोकेम्पस (hippocampus), पाइप मछली (pipe fish) और मेंढक की बिरादरी का एक जन्तु पाइपा अमरीकाना (*pipa americana*) मादा के अण्डों को अपने शरीर पर धारण करके उनका पोषण करता है। एक मछली फोटोकोरिनस (*photocorynus*) में नर इतना हीन और स्त्री-निर्भर हो जाता है कि वह मादा का दास बना रहता है।

ड्रेगनेट (Dragonets) मत्स्य युगल रतिक्रीडा-रत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

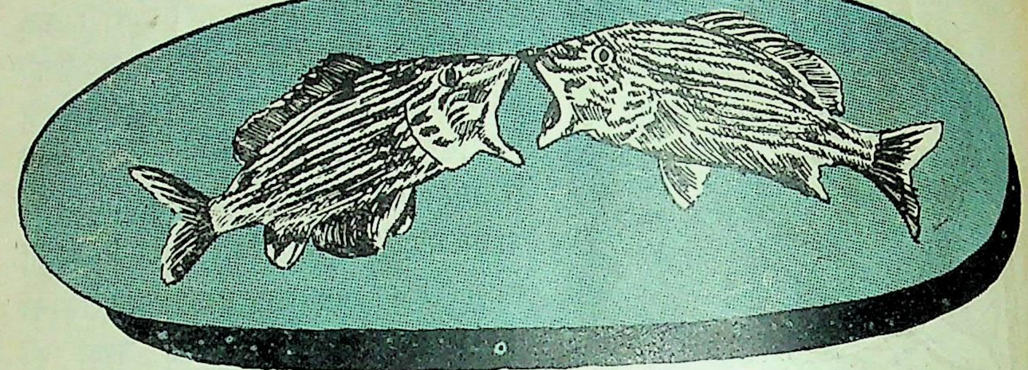

नीली पट्टीदार ग्रन्ट मछलियों के ये प्रतिनिधि नर और मादा प्रणय-मुद्रा में

मछलियों में नर-वर्ग ही अधिक क्रियाशील रहता है। यह भी समागम-काल के लिए स्वयं को विशेष रूप से तैयार कर लेता है। आकर्षक और चमकीले रंग उभर आने के साथ ही इसके स्वभाव में भी तेजी आ जाती है। उन दिनों अपनी मादा के निकट आने वाले प्रत्येक पराये नर को यह अपना कट्टर शत्रु समझता है। काँटेदार पीठवाली स्टिकिलबैक (stickle-back) तथा सियाम की लड़ाकू मछली इसके उत्तम उदाहरण हैं। स्टिकिल बैक राबिन के नर को मादा प्राप्त करने के लिए शौर्य का प्रदर्शन करना पड़ता है। पुराने क्षत्रिय राजाओं की भाँति यहाँ भी झगड़े होते हैं। नर अपने से कई गुने बलवान प्रतिद्वन्द्वी से टक्कर लेता है। लड़ाकू नर-मत्स्य तो प्रणयावेग की आन्तरिक आग से दीप्त हो उठता है और एक तूफानी दौर की भाँति संवनन-क्रिया सम्पन्न करता है।

कुछ मछलियाँ ऐसी हैं जो मकड़ी की भाँति समागम के पश्चात् नर के जी का जंजाल बन जाती हैं। तब अण्डों की सुरक्षा के लिए नर दूर तक मादा को खदेड़ आता है और यों एक बार की अपनी प्रिया किन्तु बाद की जानलेवा शत्रु से पीछा छुड़ाता है। शेर एक से अधिक पत्नी नहीं रखता। पक्षियों में बहुपतित्व या बहुपत्नीत्व है अथवा नहीं इस विषय में पक्षी-जीवन-वेत्ताओं के विभिन्न मत हैं।

दादुर-ध्वनि, एक नेह-निमंत्रण

मेंढकों के सम्बन्धी न्यूट (newt) में मादा से अंतरंग निकटता स्थापित करने के लिए काले-काले धब्बों की मखमली पोशाक उमड़ आती है। सिर से पैर तक की झालर, चमकीले वस्त्र और नशीली भाव-भंगिमाएँ मादा को सहज ही लुभा लेती हैं और वह गुब्बारेनुमा खोल से निकले हुए पुरुष के नर बीजों (sperms) को अपने दोनों हाथों में लेकर पैरों की ओर ले जाती है और अन्त में वह स्त्रीबीजवाहिनी (oviduct) तक पहुँच जाता है।

दादुर (मेंढक), मोर और पपीहा (cuckoo) की तरह समय आने पर टर्र-टर्र की आवाज करके मादा के लिए आवाहन-दुंदुभी बजाता है। मेंढक का अस्थायी विवाह उसके लिए एक लाटरी है। किसी भी और चीज का विचार न करके जो भी मादा सर्वप्रथम जयमाला लेकर आगे आती है उसी को स्वीकार कर लिया जाता है। प्रेमक्रीडा में सचमुच ही मीठी आवाज का बड़ा स्थान है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋतुकाल आया और मादा के शरीर की नवीन गंध से प्रेरित सर्प बावला बन जाता है। वह गंध उसे मोहांध बना देती है। उसी के सहारे वह मादा के निकट पहुँच जाता है। जल-सर्प तथा गार्टर-सर्प मादा के बदन पर अपनी ठोड़ी रगड़कर मानो उसकी खुशामद करते हैं। ह्विप जाति का सर्प अपनी सरपट दौड़ और उछल-कूद दिखाकर मादा को रिझा लेता है और सहमति मिल जाने पर कुण्डली बनाकर दोनों आलिंगन-बद्ध हो जाते हैं और उसी मुद्रा में अपने-अपने सिर उठाकर इस प्रकार सटा लेते हैं कि मादा का सिर नर के सिर से कुछ उठा ही रहता है। वह मुद्रा एक वीणा के समान दिखती है और १-१।। घण्टे तक वह प्रणय नृत्य चलता है। चरम पर पहुँच कर वह सम्मोहन रति-क्रिया में परिणत हो जाता है।

भारत में सर्वत्र पायी जाने वाली छिपकली (*calotis versicolor*) में नर की संख्या मादा की अपेक्षा अधिक होती है। नर कई मादाओं के बीच अश्लील चेष्टाएँ करके मादा को प्रसन्न करने की कोशिश करता है। एक दूसरी अफ्रीकन छिपकली (*agana colonorum*) में तो पासा ही पलट जाता है। पाँच-सात मादाएँ एक नर के नेतृत्व में रहती हैं। नर का ध्यान अपनी ओर केन्द्रित करने के लिए वे मटक-मटककर दौड़ती, नाचती और राग-रंग से रति की अर्चना करती हैं। कई छिपकलियों में आपस में खूब झगड़े होते हैं।

स्तनपायी प्राणियों का प्रणय-वैविध्य

सम्भवतः नर हरिण में बढ़े हुए सींग (antlers), बोअर के दाँत (tusk), गैंडे के सिर के पास का नुकीला काँटा, मधु-मक्खी का डंक इनके प्यार के झगड़ों का निपटारा करने के लिए और आये दिन संयोगिता स्वयंवर रचाने के लिए प्रकृति ने प्रदान किये हैं।

बिल्ली की म्याऊँ-म्याऊँ, हाथी की चिग्घाड़, भैंस का डकराना और घोड़े का

नर सील निर्धारित स्थल पर मादा से कुछ दिन पूर्व ही पहुँचकर प्रतीक्षा-रत रहता है। इनकी रतिक्रिया जून के आरम्भ में होती है

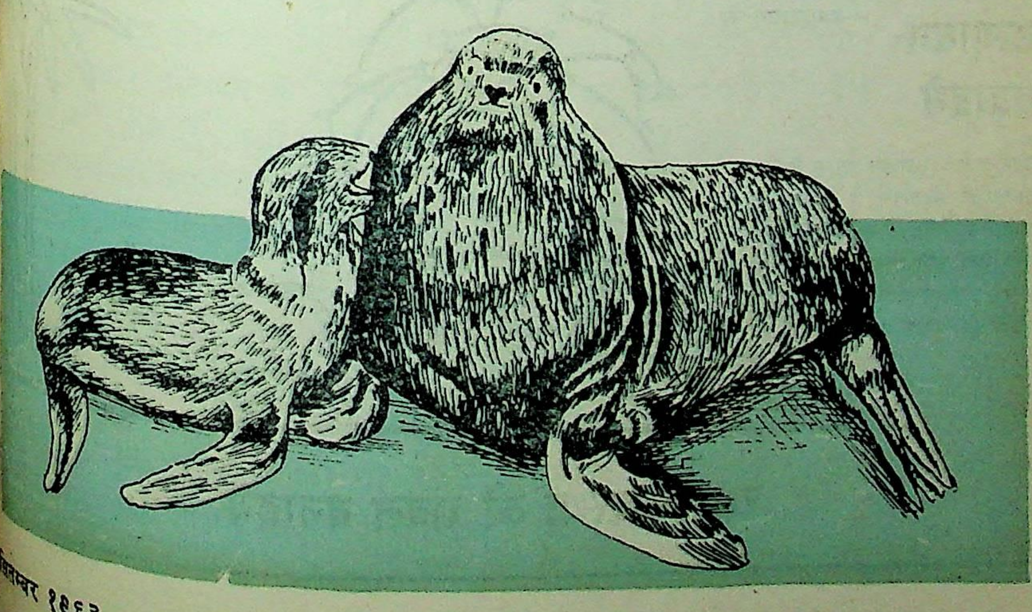

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिनहिनाना अपने जोड़ीदार को बुलाने के लिए होता है। हिरण और सेह (porcupine) तो प्रेमालाप के दिनों के अलावा लगभग गूँगे होते हैं। नर उरांग-उटान (urang utan) में आवाज़ को झंकृत करने के लिए छाती पर एक थैली-सी होती है। बिल्ली के बराबर आकार के चिल्लाने वाले बन्दर (howler monkey) में नर की आवाज शेर की दहाड़ जितनी ऊँची होती है।

कुत्ता, बिल्ली, खरगोश और दूसरे चौपाये पूँछ के नीचे इत्र की शीशी को छुपाये सम्भोग के दिनों में मादा को मोहित करने का प्रयत्न करते हैं। नर हाथी में ये गन्ध ग्रन्थियाँ (scent glands) नयनों के निकट तथा नर ऊँट में सिर के पीछे होती हैं। मगर-मच्छ में गले से टपकती हुई ये ग्रन्थियाँ रास्ते भर अपनी सुगन्ध छोड़ती आती हैं जिसे सूँघती हुई मादा नर को खोज निकालती है।

बन्दरों की प्रणयलीला मनुष्य के निकटतम है। इनका मुख्य आधार किलकारी है। ब्राजील में पाया जाने वाला बन्दर आकार में तो विशेष बड़ा नहीं, किन्तु आकार के अनुपात में उसकी किलकारी प्राणी-जगत में अद्वितीय है। ऋतुकाल में इसकी जीभ की अस्थियाँ पतली थैली के रूप में बदल जाती हैं। हवा भरने पर वह थैली मनुष्य की मुट्ठी के आकार की हो जाती है। उसी की सहायता से जब यह किलकारी मारता है तब निकटवर्ती विस्तार गूंज उठते हैं। अन्य मनोरंजक प्रयोगस्वरूप एक पशु-वाटिका में पाली हुई मादा चिम्पान्जी को जब एक के बाद अनेक नर-चिम्पान्जी पसन्द न आये तब आखिर २०१वें नर पर उसकी नजर ठहर पायी थी। तब कहीं जाकर उस पशुवाटिका को प्रथम चिम्पान्जी-शिशु प्राप्त हुआ था।

आजादी खतरे में है।
अपनी पूरी ताकत लगा कर इसकी रक्षा कीजिए।
—जवाहरलाल नेहरू

उत्पादन बढ़ाइये

आज अधिक उत्पादन भारत के लिए उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि शरीर के लिए जीवन-दायक रक्त। आप खेतों और कारखानों में जितना अधिक उत्पादन बढ़ायेंगे, देश को उससे उतनी ही अधिक ताकत मिलेगी।

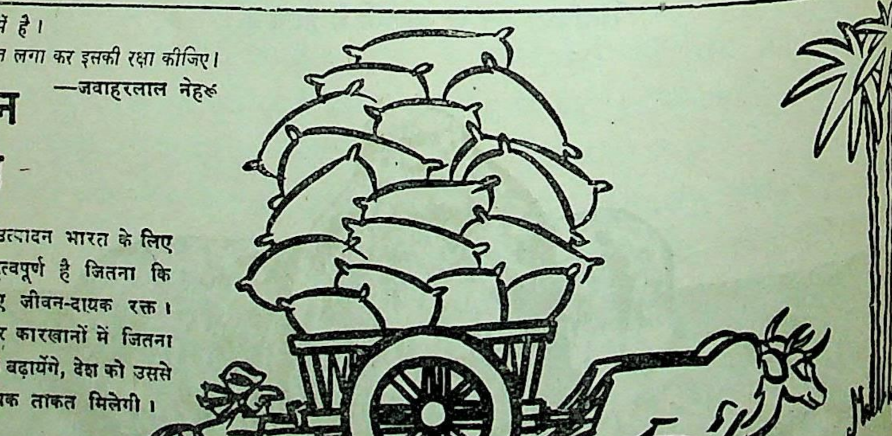

रक्षा व्यवस्था को सबल बनाइये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

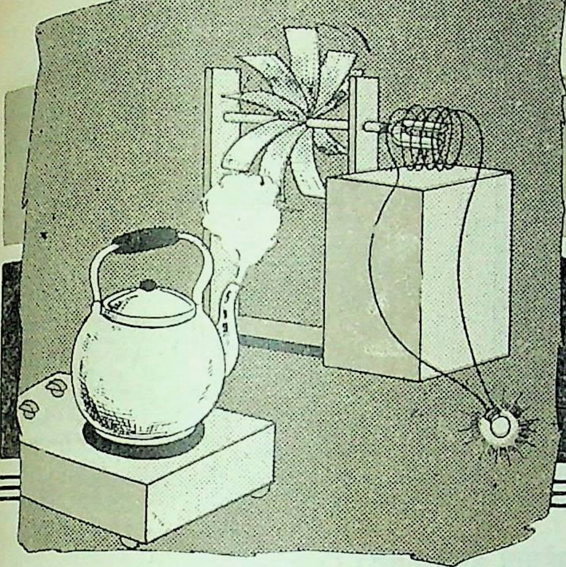

हमारी बिजली

सुशीलकुमार

एक समय था जब मानव आग जलाकर उससे रोशनी का काम लिया करता था। परन्तु अब तो हमने स्विच आन किया और कमरा रोशनी से भर गया। हीटर जलाकर केतली रख दी और ५ मिनट में चाय तैयार। घर बैठे ही रेडियो द्वारा संसार भर के समाचार मालूम हो जाते हैं और टेलीविजन द्वारा सिनेमा का आनन्द लूटते हैं। यह सब विद्युत का चमत्कार है। विद्युत हमारे जीवन का एक अभिन्न अंग बन चुकी है। कभी आपने यह भी सोचा है कि यह विद्युत, जिसका हमारे प्रतिदिन के जीवन में इतना महत्त्वपूर्ण स्थान है, कहाँ से आती है और कैसे उत्पन्न की जाती है?

आप यह जानते हैं कि सब प्रकार की शक्ति हमें सूर्य से प्राप्त होती है। यह बात विद्युत के विषय में भी सही मानी जा सकती है। सूर्य समुद्र तथा पृथ्वी से पानी वाष्प के रूप में लेता है जो बादलों के रूप में इकट्ठा हो जाता है और फिर वर्षा तथा बर्फ के रूप में पृथ्वी पर गिरता है। इसी बर्फ के पिघलने पर तथा वर्षा के पानी से नदियाँ बनती हैं, जो पन बिजलीघर चलाने के काम आती हैं। करोड़ों वर्षों से सूर्य पेड़-पौधों, मछलियों तथा जानवरों के जीवन में सहायता करता आ रहा है। उसकी शक्ति इनमें जमा हो गयी थी और जब वे खत्म हुए तब बड़े-बड़े पर्वतों के बनने के कारण उनमें दब गये। इन्हीं से हमें अब कोयला, तेल तथा गैस प्राप्त होते हैं, जिनसे वाष्प बिजलीघर (steam power house) चलते हैं। यूरेनियम के परमाणु में भी यह शक्ति संचित रहती है। इसको भी विद्युत शक्ति में परिवर्तित किया जा सकता है।

विद्युत कैसे बनती है

चुम्बकीय शक्ति की वजह से जब एक बड़ा चुम्बक घूमता है तो तारों में विद्युत उत्पन्न होती है। बिजलीघरों में एक विशाल चुम्बक को ताँबे के तारों के चारों तरफ घुमाकर विद्युत उत्पन्न की जाती है। यह हम साधारणतः दो तरह से कर सकते हैं—जल द्वारा एवम् वाष्प द्वारा। दोनों अवस्थाओं में इनकी शक्ति से एक पहिया घूमता है जिसे टरबाइन कहते हैं। इस टरबाइन से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

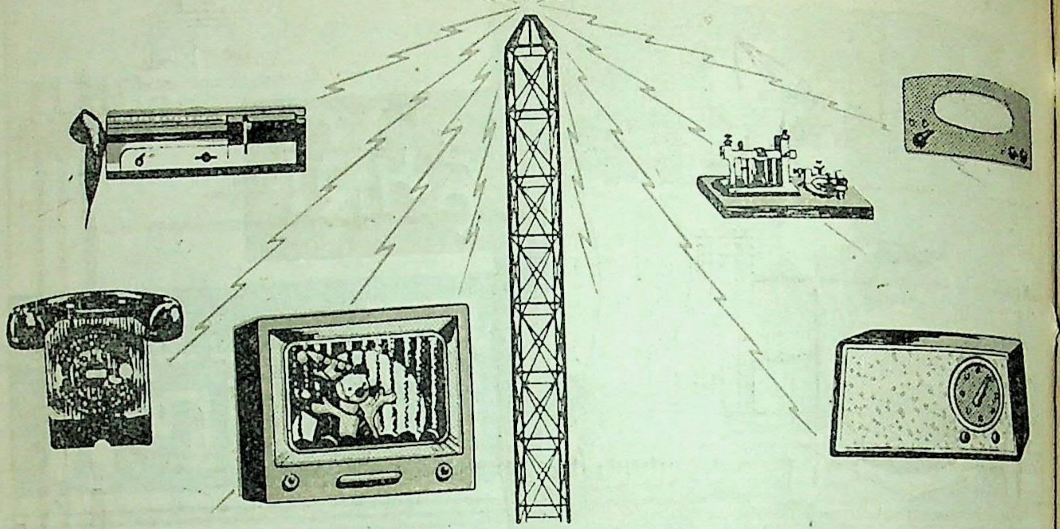

संदेश तथा चित्र पहुँचाने वाली हमारी बिजली

चुम्बक जुड़ा रहता है और इसके साथ-साथ वह भी घूमता रहता है। चुम्बक तथा ताँबे के तार मिलकर जनरेटर कहलाते हैं। इसमें जो चुम्बक हम प्रयोग करते हैं वह विद्युतीय चुम्बक होता है।

पन बिजलीघर

एक पन बिजलीघर को चलाने के लिए करोड़ों टन पानी की आवश्यकता होती है। यह पानी बाँध के पीछे एक झील में इकट्ठा किया जाता है। झील बिजलीघर से काफी ऊँचाई पर बनायी जाती है जिससे कि जब पानी गिरे तब उसमें टरबाइन को चलाने के लिए काफी शक्ति आ जाए।

बिजलीघर या तो बाँध की सतह पर होता है या उससे नीचे। कुछ बिजलीघरों में तो पानी की गति, जब वह टरबाइन से टकराता है, २०० मील प्रति घंटा से भी अधिक होती है। पर्वतों में तो एक ही नदी के ऊपर कई झील तथा पन बिजलीघर क्रम से बनाये जा सकते हैं। इस प्रकार एक ही नदी का पानी बार-बार कई पन बिजलीघर चलाने के काम आ सकता है। यही पानी बाद में नदियों में बहकर खेतों तथा शहरों में काम आता है।

वाष्प के द्वारा विद्युत

जब हम एक केतली में उसका ढक्कन बन्द रखते हुए पानी उबालते हैं तो वाष्प उसके ढक्कन को ऊपर उठाने की कोशिश करती है। यह इसलिए होता है कि जब पानी वाष्प में परिवर्तित होता है तो इसको अधिक स्थान की आवश्यकता होती है और वह फैलने की कोशिश करता है। अब अगर हम केतली में एक पतली नली लगा दें तो वाष्प उसके द्वारा निकलने लगेगी। अगर इसके आगे एक हलका पहिया रख दें तो वह वाष्प की शक्ति से घूमने लगेगा। इसी सिद्धान्त के आधार पर वाष्प बिजलीघर कार्य करते हैं।

वाष्प बिजलीघरों की कार्य प्रणाली

वाष्प बिजलीघरों में एक विशाल बॉयलर में सैकड़ों नलियों के अन्दर पानी उबलता है। यह बॉयलर किसी-किसी बिजलीघर में तो १२ मंजिल तक ऊँचे होते हैं। पानी वाष्प बन जाता है तब इसको बहुत अधिक दबाव के साथ टरबाइन पर छोड़ा जाता है जिससे टरबाइन घूमने लगता है और उसके साथ संलग्न चुम्बक भी स्थिर तारों के अन्दर घूमने लगता है। इस क्रिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

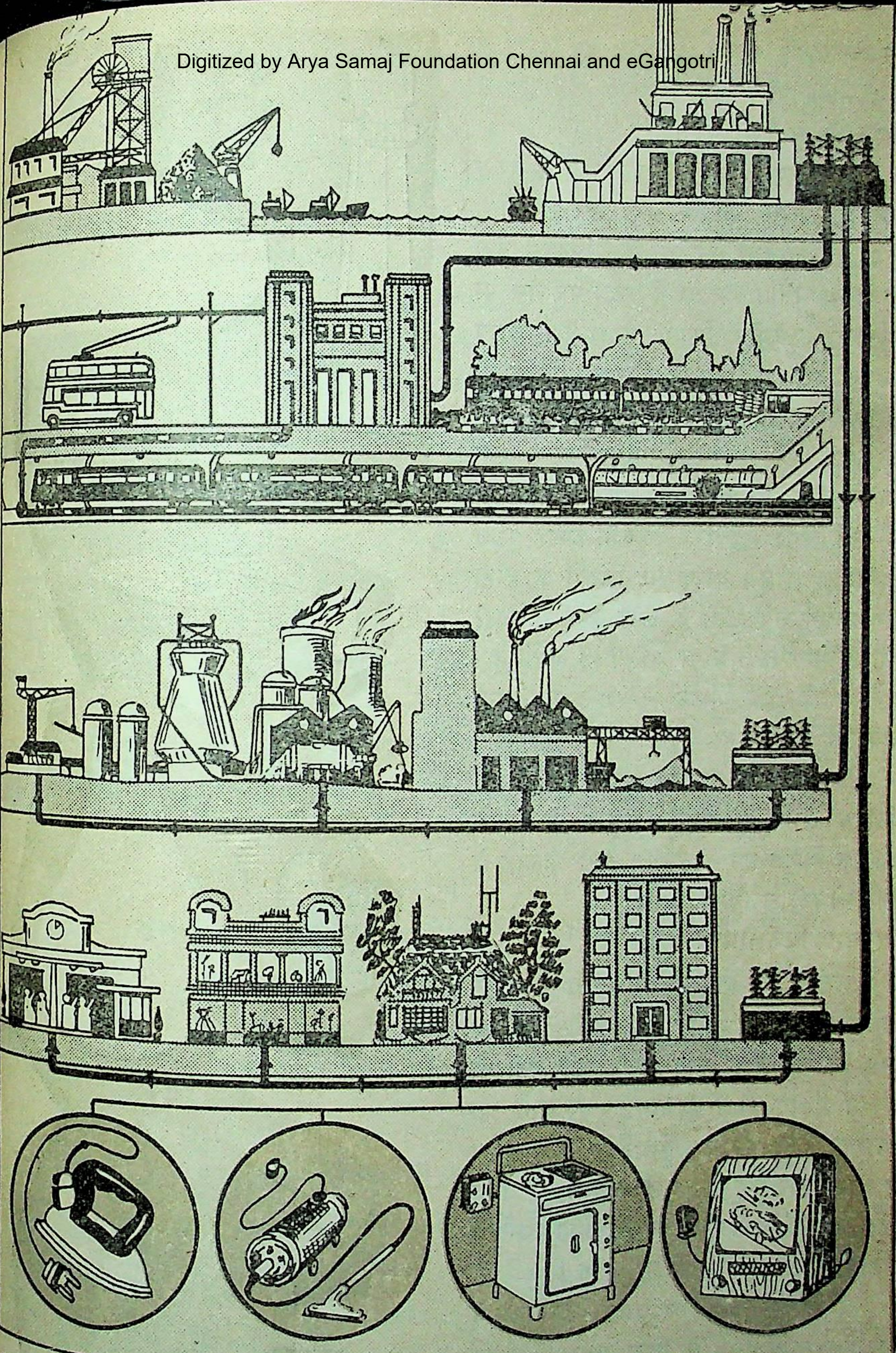

खान के कोयले से बिजली के स्विच तक—(ऊपर से नीचे) कोयले में निहित ताप की ऊर्जा को चालकशक्ति में परिवर्तित करके उससे टर्बो-आल्टरनेटर चलाकर विद्युत पैदा की जाती है। उत्पन्न हुई बिजली को केबुल द्वारा दूर-दूर तक भेजने योग्य बनाने के लिए उसे ट्रांसफार्मर से गुजारकर उसका वोल्टेज बढ़ाया जाता है। वे ही ट्रांसफार्मर कारखानों के लिए उसका वोल्टेज आवश्यकतानुसार घटा भी देते हैं। घरेलू यन्त्रों के लिए और भी कम वोल्टेज की आवश्यकता रहती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से जो विद्युत उत्पन्न होती है वह तारों में १८६००० मील प्रति सेकण्ड की गति से बहने लगती है।

साधारणतः वाष्प बिजलीघरों में वाष्प बनाने के लिए कोयले को जलाया जाता है। जहाँ कोयला सरलता से उपलब्ध नहीं होता या महँगा पड़ता है वहाँ पर गैस या तेल का उपयोग किया जाता है। वाष्प बिजलीघरों में एक बार पानी लेकर ही उसे बार-बार उपयोग में लाया जाता है। टरबाइन को चलाने के बाद वाष्प एक कन्डेन्सर में जाती है। कन्डेन्सर में बहुत-सी नलियाँ लगी रहती हैं जिनमें ठण्डा पानी बहता रहता है। वाष्प इन नलियों के चारों तरफ चक्कर काटती है और अन्त में ठण्डी होकर फिर पानी में परिवर्तित हो जाती है। यही पानी दुबारा फिर बॉयलर में वाष्प बनने के लिए भेजा जाता है।

इस प्रकार वाष्प बिजलीघरों से हमें विद्युत प्राप्त होती है। संसार में सबसे अधिक विद्युत का उत्पादन इसी प्रकार के बिजलीघरों से किया जाता है।

परमाणु बिजलीघर

संसार की कोयले, गैस तथा तेल की मात्रा सीमित है और यह बड़ी तेजी से खर्च हो रहीं है। यदि यही गति रही तो इनका भंडार शीघ्र ही समाप्त हो जाने की आशंका है। इसलिए वैज्ञानिक लम्बे समय से प्रयत्न कर रहे हैं कि इन चीजों की जगह किसी और ईंधन की खोज की जाए जिसका भंडार काफी समय तक चल सके।

अथक परिश्रम के बाद वैज्ञानिकों ने इस प्रकार के ईंधन के लिए एक तत्त्व को खोज निकाला है। इसका नाम यूरेनियम है। जिन बिजलीघरों में इस तत्त्व का उपयोग होता है उन्हें परमाणु बिजलीघर कहते हैं। इनमें यूरेनियम के परमाणुओं के

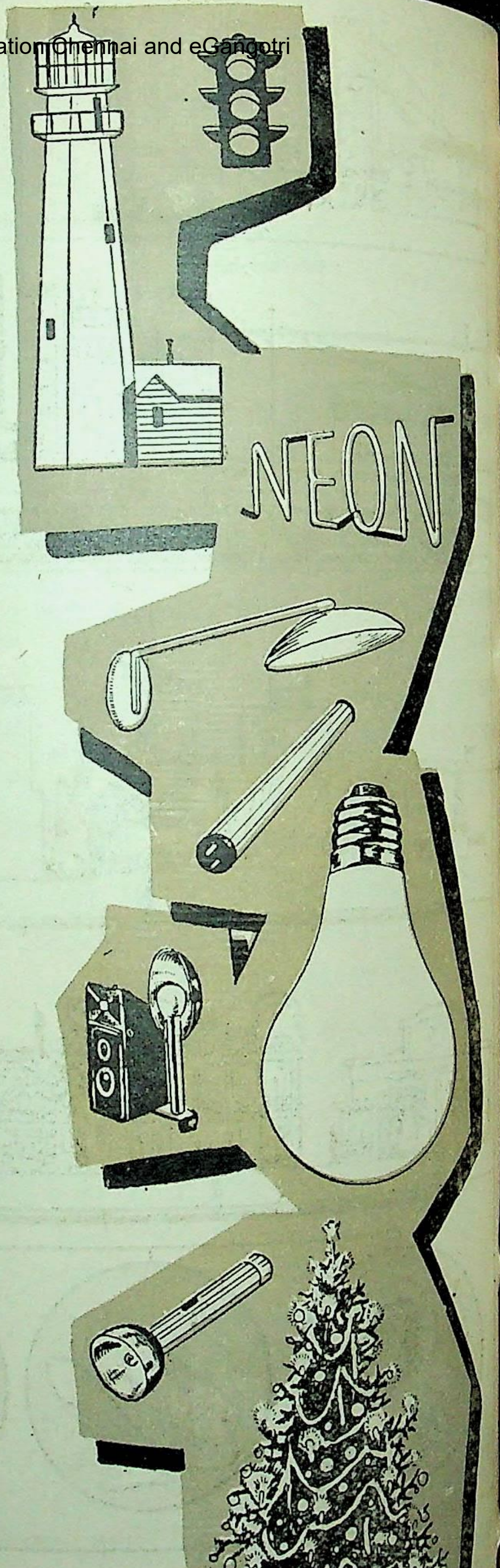

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विखंडन से ताप उत्पन्न किया जाता है जिससे वाष्प बनती है। ये बिजलीघर और सब बातों में वाष्प बिजलीघरों के ही समान होते हैं। अन्तर केवल इतना होता है कि इनमें कोयले, तेल या गैस की जगह यूरेनियम ईंधन के रूप में प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार का एक परमाणु बिजलीघर भारत में भी तारापुर (गुजरात) नामक स्थान पर स्थापित किया जा रहा है। भारत में इस प्रकार के कई और बिजलीघर बनाने की योजना है।

उत्पादित विद्युत को बिजलीघर के बाहर ट्रांसफार्मर में भेजा जाता है, जहाँ से यह तारों द्वारा शहर और गाँवों में भेजी जाती है। ट्रांसफार्मर का काम वोल्टेज को बढ़ाना है। वोल्टेज विद्युत को एक प्रकार का धक्का देता है, जिससे वह अपने मार्ग में आगे को बढ़ सके। वोल्टेज का काम वही होता है जो आपके हाथ का होता है, जब आप पम्प के हैन्डिल को दबाते हैं। ट्रांसफार्मर वोल्टेज को इतना बढ़ा देता है कि विद्युत सैकड़ों मील दूर जा सके। जब विद्युत शहरों और गाँवों में पहुँच जाती है तो एक दूसरे ट्रांसफार्मर द्वारा फिर से इसका वोल्टेज कम कर दिया जाता है। अगर वोल्टेज बहुत अधिक होगा तो आग लग जाने का खतरा है।

इस प्रकार विद्युत उत्पन्न की जाती है और आपके घर तक पहुँचायी जाती है। अब चाहे इससे आप रोशनी कीजिए, रेडियो चलाइए, टेलीविजन देखिये या पंखा चलाइए। यह हर समय आपकी सेवा के लिए तत्पर है। ●

स्वतंत्रता की सोलहवीं वर्षगाँठ पर

हम भारतवासी पुनः संकल्प करते हैं कि

प्राणपण से देश की स्वतंत्रता की रक्षा करेंगे।

हिमालय पर

उत्तरी सीमा की रक्षा हमारे वीर जवान कर रहे हैं

परन्तु

देश के इन रणबांकुरों को

अधिकाधिक शक्ति प्रदान करना हमारा कर्तव्य है।

इसके लिए—

खेती और कारखानों में

उत्पादन बढ़ाइए,

अपना खर्च घटाइए

और

बचत का धन

राष्ट्रीय बचत योजनाओं में लगाइए।

घोर परिश्रम और आपकी बचत से ही राष्ट्र सुरक्षित रहेगा।

सूचना निदेशालय, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचित्र संसार

नाखूनों का बीमा

जापान में कालीन और रंग-बिरंगे पर्दे बनाने वालों को अपनी अँगुलियों के नाखूनों की बहुत हिफाजत रखनी पड़ती है। खासकर बीच की अँगुली के नाखून को तो बड़े ही यत्नपूर्वक पाला-पोसा जाता है। इस नाखून के सिरे पर एक विशिष्ट माप का खाँचा बनाना पड़ता है जो धागों को बँटने के काम में आता है। इस नाखून को क्षति पहुँचने का अर्थ है आजीविका का तब तक रुके रहना जब तक नाखून पुनः बढ़ न आए। इसीलिए कितने ही सम्पन्न कारीगर इसका बीमा कराये रहते हैं।

दृष्टिहीन, किन्तु ज्ञान का अवतार

सात वर्ष की अवस्था में दृष्टि खोकर भी जीवन के १०१ वर्ष पूरे करने वाला हनावा होकाइशी (जापान) १७२२ से १८२३ तक ज्ञान का ऐसा चमत्कारिक व्यक्ति रहा जो उन दिनों के इतिहास में अतुलनीय माना जाता है। दृष्टि खोने के दिन से ही उसने गहन अध्ययन प्रारम्भ कर दिया और अपने ज्ञान से संसार को आश्चर्य में डाल दिया। चार लाख ग्रन्थों की, जिनमें से अनेक तो केवल एक ही बार उसे सुनाये गये थे, सामग्री उसके स्मरण-कोष में सुरक्षित थी। चाहे जब कोई भी उद्धरण प्रस्तुत कर देना उसके लिए सहज था। अपने असीम ज्ञान-भण्डार के आधार पर उसने २८२० खण्डों का महान ग्रन्थ तैयार किया है।

सप्ताश्चर्यों में से एक, यह पिरामिड भी

संसार के प्राचीन सप्ताश्चर्यों में सम्मिलित, मिस्र का केओप्स (Cheops) नामक पिरामिड विशालतम है। इसके निर्माण में २० वर्ष तक एक लाख व्यक्तियों ने प्रतिदिन काम किया था। २॥-२॥ टन के तथा उससे भारी भी, लगभग २५ लाख शिलाखण्ड इसमें ९ मील की दूरी से ला-ला कर लगाये गये हैं। इन पत्थरों के ढोने का वह अलग मार्ग आज भी देखा जा सकता है। लगभग १३ एकड़ के भूमि विस्तार में फैला हुआ संसार का सबसे बड़ा पिरामिड ऊँचाई में लन्दन के सेंट पाल चर्च से भी १०० फुट अधिक ऊँचा है।

प्यारा दुश्मन

अमरीका में पाया जाने वाला यह रेटलस्नेक और गिलहरी जैसा यह बिलकारी प्राणी आपस में कट्टर शत्रु नहीं हैं। परिस्थितियों के प्रभाव ने इन्हें एक आश्चर्यजनक अपवाद सिद्ध किया है। न तो सर्प ही कभी इसे डसने की सोचता है और न यही सर्प पर आक्रमण करता है। यों दोनों एक ही बिल में शान्ति और सहयोगपूर्वक रह लेते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्मराज के कुत्ते

शीवावा (Chihuahua) कुत्तों की उस जाति का नाम है जो अत्यन्त प्राचीन मानी जाती है। आकार में सबसे छोटे होना इनकी विशेषता है। इनका इतिहास इस अर्थ में बड़ा सुनहरा रहा है कि प्राचीन मैक्सिको-निवासी इन्हें देवदूत मानते थे और ये कुत्ते भोजन केवल सोने के ही पात्रों में पाते थे। उन दिनों उच्च घराने के व्यक्ति के शव को बलि चढ़ाये हुए एक शीवावा कुत्ते के साथ इस मान्यता से दफनाया जाता था कि मृतात्मा को शान्ति मिलेगी।

१६वीं शताब्दी में इनके १-२ नमूने स्पेन लाये गये और वहाँ इनकी वंश-वृद्धि की गयी। उन दिनों ये वहाँ की सम्पन्न महिलाओं के प्रिय पात्र बन गये। वे इन्हें सोते समय अपने नर्म बिस्तरों पर, पाँवों को गर्माने के लिए सुला रखती थीं। लगभग १५० वर्ष ये कुत्ते लुप्तप्राय रहे। १८५० में पुनः इनकी जंगली नस्ल के कुछ नमूने हाथ आने पर इनका परिपालन और संरक्षण किया गया। अमरीका में प्राप्त ये कुत्ते उसी नस्ल के हैं। चित्र में प्रदर्शित, मुट्ठी में समाया हुआ नन्हा कुत्ता तीन महीने से कम आयु का नहीं और वजन में भी केवल १४ औंस है!

सृष्टि के संतुलन में बैक्टीरिया

कोलतार (asphalt) ही जिनका भोजन है, ऐसे बैक्टीरिया प्रकृति के विधानानुसार सृष्टि का संतुलन बनाये रखने के साथ-साथ मानव-हितकारी विभिन्न रासायनिक प्रयोगों के लिए उल्लेखनीय सुविधाएँ भी प्रस्तुत करते हैं। साउथ वेस्टर्न लूसियाना यूनिवर्सिटी के प्रो. रिचार्ड ट्रेक्सलर ने अध्ययन के पश्चात् प्रदर्शित किया है कि कोलतार खाने वाले बैक्टीरिया में स्वाद-कलिकाएँ प्रायः निष्क्रिय होती हैं और इन्हें विशेष ही प्रकार का कोलतार माफिक आता है। अतः हमें यह सुविधा रह सकती है कि दैनिक कार्यों में काम आने योग्य कोलतार को हम मुक्त रूप से उपयोग में ला सकते हैं। साथ ही, इनके खाने योग्य कोलतार के रासायनिक परीक्षण में भी सुविधा रहेगी। प्रकृति ने यदि इन बैक्टीरिया को इस काम पर तैनात न किया होता तो भूमण्डल पर बढ़ता हुआ एस्फाल्ट रहने योग्य स्थान ही शेष न छोड़ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

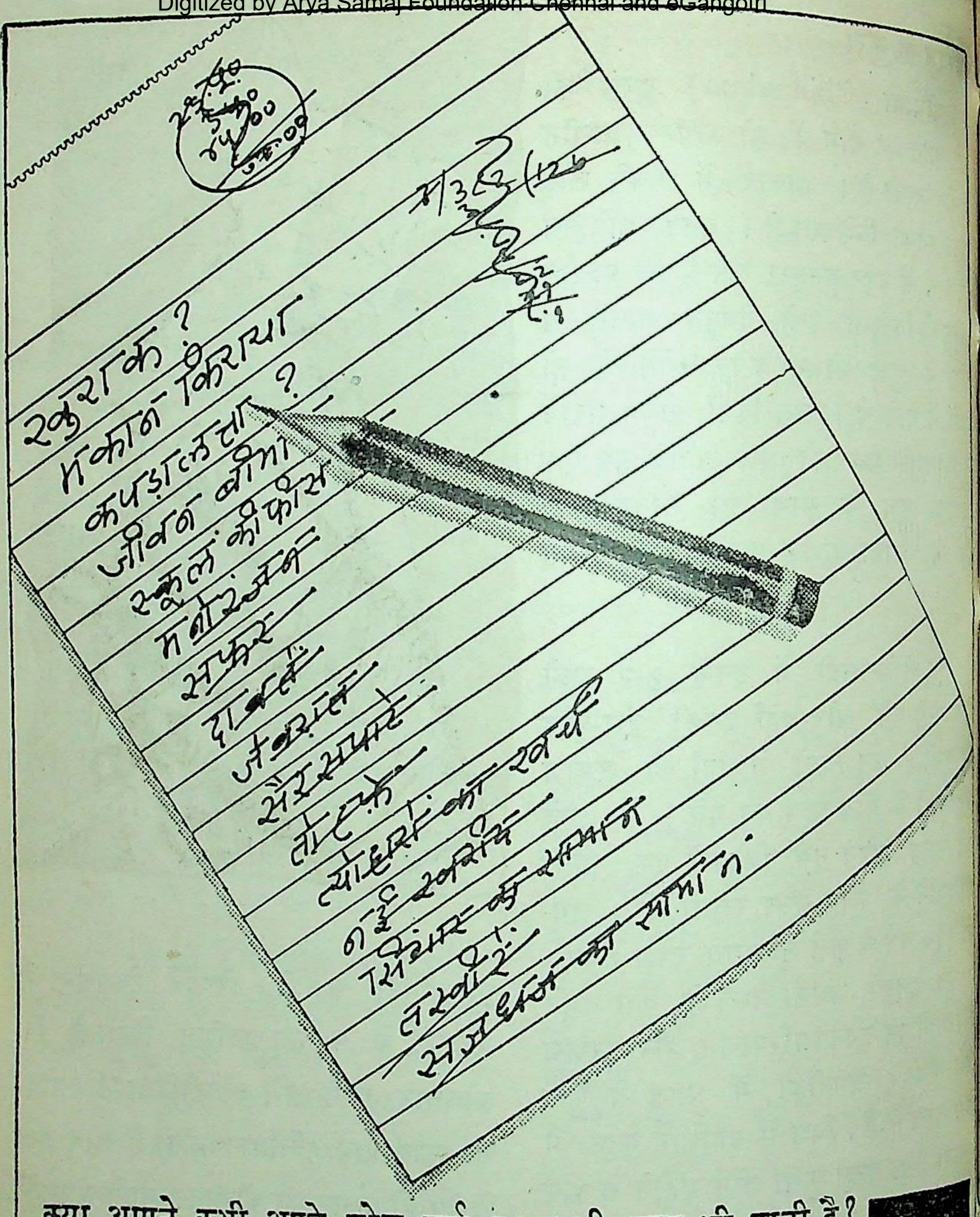

क्या आपने कभी अपने घरेलू खर्च पर दूसरी नज़र भी डाली है? जीवन की ज़रूरी चीज़ों में याने किराया, जीवन बीमा, स्कूल फीस वग़ैरह में किफ़ायत करना मुमकिन नहीं है। लेकिन आप दूसरी चीज़ों पर खर्च कम कर सकते हैं? आप स्वयं अपने खर्च की सूची बनाइए और देखिए कि किन किन फ़ालतू चीजों से आप छुटकारा पा सकते हैं?

जीवन बीमा सुरक्षा का बेजोड़ साधन है।

ASP/LIC-Z-2

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्यारे बच्चो,

सितम्बर का अंक प्रस्तुत है । लिखना, कैसा लगा ?

'तुम्हारी कलम से' स्तम्भ के लिए भारत के भूतपूर्व एवं वर्तमान वैज्ञानिकों के सचित्र परिचय के रूप में मैंने उत्तम रचनाएँ माँगी थीं । तुम्हारे पत्रों में रचनाओं के सम्बन्ध में आश्वासन मिले हैं, तदनुसार उनकी प्रतीक्षा है ।

इस बार तुम्हारे अनेक प्रश्नों तथा पत्रों को देखते हुए इस क्लब के कुछेक नियमों को निम्न भाँति दोहराने की आवश्यकता है :

(१) सदस्यता कूपन भेजने के कम से कम १५ दिन तक प्रमाणपत्र प्राप्त करने की प्रतीक्षा आवश्यक है ।

(२) नये सदस्यों में अपना नाम देखने के लिए इस हिसाब से अनुमान लगाओ कि प्रति मास कुल १८० नाम ही छपने का स्थान रहता है ।

(३) अपना फोटो भेजने के बाद छपने के लिए कम से कम ५-६ मास तक की प्रतीक्षा आवश्यक है ।

(४) ऐसा भी देखने में आया है कि अधिक उत्साही सदस्य एक से अधिक (चार-छह तक) सदस्यता कूपन भर कर भेज देते हैं । इससे तुम्हें लाभ तो कुछ नहीं होता, पर असुविधा ही बढ़ती है । अतः एक ही बार सदस्यता कूपन भेजने की सावधानी रखें ।

जुलाई अंक के लेखों में जबलपुर के जगेश्वरप्रसाद, फिरोजाबाद के शशिकान्त तथा किशनगंज के मिलनकुमार को **'देश-देश के नाग'** बहुत अच्छे लगे । इसी प्रकार बिलासपुर से सुशीलकुमार तथा ग्वालियर से विष्णुभगवान ने **'पनडुब्बी'** लेख सराहा है और प्रत्येक अंक में आधुनिक मशीनरी के बारे में कम से कम एक लेख देते रहने का आग्रह भी किया है । अतः इस अंक में **'अन्तरिक्ष किरणों का निर्माण'** लेख इसी आशय से दिया जा रहा है ।

मेरा यह सतत् प्रयास रहता है कि **विज्ञान-लोक** द्वारा तुम्हारी नित नूतन जिज्ञासाओं की यथासम्भव परितुष्टि करूँ । यह तभी सम्भव है जब तुम अपनी अभिरुचियों से मुझे परिचित कराते रहो ।

शुभ-कामनाओं सहित,

तुम्हारी
कृष्णा दीदी

प्रतियोगिता संख्या ४२ के विजेता

प्रथम पुरस्कार

कृष्णसिंह (१२८९) नगला पिथौरा, प्रदीपकुमार (४१३५) इलाहाबाद, नरेशकुमार (७५५६) अमृतसर, कुमारी मायादेवी (८६०४) कानपुर ।

द्वितीय पुरस्कार

गजेन्द्रपाल सिंह (१६०५) मेरठ, सुधीरकुमार राठौर (१६१९) आगरा, गोपाल माधव (२३७९) मेरठ, मंघाराम हरवानी (५२५७) जोधपुर, ओमप्रकाश गुप्ता (९५१५) मेरठ ।

तृतीय पुरस्कार

गिरीशचन्द्र अग्रवाल (११५७) आगरा, अशोक गुप्ता (२७०१) लखनऊ, संजय गुप्ता (३४६७) लखनऊ, कैलाशनाथ डोंगरे (३८३२) इटारसी, रवीन्द्रकुमार मेहरा (३८४७) अजमेर, रणजीत सिंह (४७२४) नयी दिल्ली, चन्द्रमोहन सिंह (४८४४) अजमेर, प्रभूदयाल (५०९५) जोधपुर, धर्मीचन्द जैन (७२३३) पीसांगन, धर्मीचन्द्र गंगवाल (७२५६) अजमेर, अरुणा मेहता (१०१७५) उन्हेल ।

कूपन : प्रतियोगिता संख्या ४४

सदस्य संख्या ....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

विज्ञान क्लब के नये सदस्य

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विन्देश्वर
(स. सं. ६०३)

कृष्णसिंह
(स. सं. १२८९)

रामस्वरूप
(स. सं. १३१८)

रजनीकान्त
(स. सं. २५३१)

प्रवीणचन्द्र
(स. सं. ४५५९)

६८१० अशोकप्रताप (१७) गोविन्दपुर, ११ कल्लूमल (१६) ब्यावर, १२ शान्तिलाल (१५) आलीराजपुर, १३ जगदीशप्रसाद (१५) जबलपुर, १४ राजेशकुमार (१४) मेरठ, १५ एस. वेणुराव (१३) जमशेदपुर, १६ एम. कुमार (१२) जमशेदपुर, १७ सर्वजीत (१३) रांची, १८ जुगलकिशोर (११) ब्यावर, १९ सत्येन्द्रनाथ (१३) खनवां, २० नवलकिशोर (१५) ब्यावर, २१ विजयभण्डारी (१४) लुधियाना, २२ शान्ताकुमारी (१४) ब्यावर, २३ बलरामदास (२०) हनुमना, २४ रमेशदत्त (१४) कानपुर, २५ किशनलाल (१७) सींथल, २६ द्वारिकाप्रसाद (१९) माधार, २७ कृष्णदेव (१५) पूर्णिया, २८ सुमेधकुमार (१४) धनबाद, २९ प्राणेशचन्द्र (१४) इन्दौर, ३० नरेन्द्रकुमार (१७) हरिद्वार, ३१ माधवलाल (१६) बालोद, ३२ भूपेन्द्रदेव (१२) भोगाँव, ३३ सत्यकुमार (२०) जबलपुर, ३४ हरिनारायण (१०) जमशेदपुर, ३५ सोमेश्वर (१६) भगवन्तनगर, ३६ सतीशकुमार (९) पटना, ३७ प्रेमनाथ (१४) वाराणसी, ३८ उमेशचन्द्र (१६) कानपुर, ३९ मनजीतसिंह (१५) सहारनपुर, ४० जयशंकर (१२) लालबाग, ४१ कु. नूतन (१०) छपरा, ४२ जगदीशचन्द्र (१६) मुरादाबाद, ४३ अशोककुमार (१४) कतरासगढ़, ४४ मशकूरआलम (१४) बुलन्दशहर, ४५ रंजन (१५) छपरा, ४६ लेखराज (१७) लाखेनगर, ४७ विकास (१४) छपरा, ४८ हेमचन्द्र (१४) हातोद, ४९ रामप्रसाद (१५) भुमरीतलैया, ५० अरविन्द (९) छपरा, ५१ मुकुन्दमोहन प्रसाद (१२) पूर्णिया, ५२ कुमारी प्रमिला (१५) पूर्णिया, ५३ मनोरंजन प्रसाद (१२) मोरातालाव, ५४ गोपालदास (१४) मेरठ, ५५ रमेशकुमार (१४) रायगढ़, ५६ रामकुमार (१६) छतरपुर, ५७ कमलेशचन्द्र (१५) जयपुर, ५८ सतीशकुमार (१५) जयपुर, ५९ अमृतकुमार (१६) जयपुर, ६० सूरजमल (१६) जयपुर, ६१ विजयप्रताप (१४) बसांव, ६२ प्रमोदकुमार (१०) बण्डा, ६३ रमेशचन्द्र (२०) चंडीगढ़, ६४ लक्ष्मीकांत (१५) अकोला, ६५ राजेन्द्रकुमार (१७) जबलपुर, ६६ शिवकुमार (१५) कलकत्ता, ६७ संगीतकुमार (११) दुर्ग, ६८ सुरेन्द्रकुमार (१५) हरद्वार, ६९ सांवरमल (१६) तिनसुकिया, ७० महेन्द्रपाल (१७) लखनऊ, ७१ प्रमोदकुमार (१४) कानपुर, ७२ दिनेशचन्द्र (२०) आगरा, ७३ प्रदीपकुमार (१४) साकची, ७४ मदनविभूषण (१२) आरा, ७५ जेरोल्ड जोसेफ (१६) दमोह, ७६ विजयकुमार (१८) देवास, ७७ निमाईप्रकाश (१५) अलीगढ़, ७८ सन्तोषकुमार (१७) बौसीं, ७९ अरुणकुमार (१३) भोगाँव, ८० अरविन्दप्रकाश (१४) आरा, ८१ कु. पूनम (१३) नई दिल्ली, ८२ श्रीनारायण (१३) कानपुर, ८३ वी. सीताराम (१२) जमशेदपुर, ८४ लोकेशराय (१६) अम्बाला, ८५ रामस्वरूप (१६) भाटापारा, ८६ महेशदत्त (१६) ब्यावर, ८७ सुशीलचन्द्र (१४) कानपुर, ८८ ओमप्रकाश (१५) मण्डलेश्वर, ८९ प्रदीपकुमार (१४) इन्दौर, ९० सुधीर (१०) फैजाबाद, ९१ मुनीशकुमार (१२) बिधूना, ९२ नारायणश्याम (१५) छिन्दवाड़ा ९३ घनश्यामदत्त (१५) मेरठ, ९४ विश्वनाथ (१३) अजमेर, ९५ कृष्णकुमार (१२) नेतरहाट, ९६ मुकुलकुमार (१२) शाहाबाद, ९७ सुरेशचन्द्र (२२) गाजियाबाद, ९८ कृष्णप्रसाद (१५) बाँदा, ९९ चन्द्रकिशोर (१८) जसीडीह, ६९०० सुरेन्द्र-

लालताप्रसाद
(स. सं. ५४१३)

मोहनप्रसाद
(स. सं. ७१८०)

सुशीलकुमार
(स. सं. ७२१६)

लालाराम
(स. सं. ७२४६)

श्रीकान्त
(स. सं. ७२७३)

ललितेश
(स. सं.

अशोक
(स. सं.

राम
(स. सं.

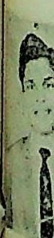
कामता
(स. सं.

कुमारी
(स. सं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ललितेश्वरप्रसाद
(स. सं. ७३६१)

अशोककुमार
(स. सं. ७८२०)

रामप्रसाद
(स. सं. ७९४७)

कामताप्रसाद
(स. सं. ८३१३)

कुमारी भारती
(स. सं. ८३४३)

कुमार (१२) विदिशा, १ सुरेशकुमार (१५) पटना, २ प्रभात-कुमार (१४) छपरा, ३ अरुण (११) लखनऊ, ४ कु. मृणालिनी (१३) दरभंगा, ५ सी. राजशेखर (१२) वाराणसी, ६ गोविन्दप्रसाद (१६) सारंगपुर, ७ शिवचरन (२८) सारंगपुर, ८ कन्हैयालाल (१८) सारंगपुर, ९ कृष्णकान्त (२१) सारंगपुर, १० रामेश्वर (१८) सारंगपुर, ११ शिवनारायण (१७) सारंग-पुर, १२ कीर्तिकुमार (१६) मुरादाबाद, १३ कु. राधादेवी (१४) हनुमना, १४ अशोककुमार (१४) इन्दौर, १५ प्राबजोत, (११) दिल्ली, १६ शैलेन्द्रकुमार (१५) उज्जैन, १७ वेलूनकुमार (१२) बालोद, १८ प्रकाशनारायण (१४) दुर्ग, १९ कंवलकुमार (१४) कलकत्ता, २० बलराज (१७) इन्दौर, २१ भरत प्रसाद (१३) बैरगनियाँ, २२ जी. सी. पन्त (१६) नौसोजाबाद, २३ सतीशकुमार (१३) कलकत्ता, २४ सोमनाथ (१७) लुधियाना, २५ इमैनवेलसैमसन (१२) वृन्दावन, २६ अरुणकुमार (११) कालका, २७ सुनीलमोहन (१४) चूरू, २८ मन्नालाल (१३) हनुमना, २९ इहितिशामनवी (१५) चेतरा, ३० राजेन्द्र-कुमार (१५) लश्कर, ३१ प्रतापविभाकर (१३) कानपुर, ३२ राजेन्द्र (१३) इटारसी, ३३ मनजीतकुमार (१४) इटारसी, ३४ प्रेमनारायण (१५) झांसी, ३५ ब्रजेश (१२) उरई, ३६ सरजूप्रसाद (१७) वाराणसी ३७ वीरेन्द्रनारायण (१८) जबल-पुर, ३८ ओमप्रकाश (११) समस्तीपुर, ३९ विनोदकुमार (१६) दुर्ग, ४० अमृतलाल (१९) लश्कर, ४१ कु. निर्मला (१४) कानपुर, ४२ रेवाशंकर (१६) सरायपाली, ४३ देवीप्रकाश (११) बुरहानपुर, ४४ उपेन्द्रदयाल (१६) लखनऊ, ४५ राजेन्द्रदयाल (१४) लखनऊ, ४६ अमृतकुमार (१५) महू, ४७ वीरेन्द्रकुमार (११) गया, ४८ विजयकुमार (१३) शाहदरा, ४९ असलमसिद्दीकी (१५) लालगंज, ५० रामकिशोर (१५) बड़ौत, ५१ मोहन प्रसाद (१५) कतरास बाजार, ५२ जगमोहन (१५) भोपाल, ५३ सत्यप्रकाश (१६) दिल्ली, ५४ सोहनलाल (१८) सुथासरामण्डी, ५५ सतीशकुमार (१२) रांची, ५६ एम. एस. रामाराव (१६) साकची, ५७ बुद्धप्रकाश (१४) बियाबानी, ५८ सुशीलमोहन (१४) मेरठ, ५९ गंगानन्द (१४) महादेव स्थान, ६० देवीप्रसाद (१३) बम्बई, ६१ पारूमल (१६) ब्यावर, ६२ प्रदीपकुमार (१२) दिल्ली, ६३ कृष्णराव (१७) इटारसी, ६४ राजेश (१०) कामठी, ६५ हरमेशलाल (१७) नई दिल्ली, ६६ मोहम्मदखाँ (१४) ब्यावर, ६७ जयप्रकाश-नारायण (१२) रतनमाला, ६८ ललन (११) खगड़िया, ६९ गुरुवचन (१७) मोकामा, ८० इकबालसिंह (१४) हीनू, ७१ मोहनलाल (१४) गया, ७२ शशांकशेखर (१३) डुमरी, ७३ वीरेन्द्रकुमार (१४) नेतरहाट, ७४ सुधीरकृष्ण (१६) भटिंडा, ७५ कौशलेन्द्रमोहन (१७) लखनऊ, ७६ सुभाषचन्द्र (१०) नैनीताल, ७७ राजेशकुमार (१५) झुँझुनूं, ७८ मुरितराम (१९) फगुरम, ७९ कुमारी डाली (१७) नई दिल्ली, ८० विकार (१३) बड़नगर, ८१ शमसुद्दीन (१६) मीरजापुर, ८२ तोषचन्द्र (१४) सागर, ८३ राजेन्द्रप्रसाद (१५) परइया, ८४ अनवरआलम (१५) गोरखपुर, ८५ पूर्णप्रकाशशरण (१२) गया, ८६ अजीत-सहाय (१२) भागलपुर, ८७ राजेश्वरप्रसाद (१२) मन्दसौर, ८८ देवेन्द्रकुमार (१०) लखनऊ, ८९ लक्ष्मणलाल (१७) आबूरोड, ९० अशोककुमार (१६) कानपुर, ९१ अशोककुमार (१४) नैनीताल, ९२ देवीप्रसाद (१४) डिगबोई ।

देवकीनन्दन
(स. सं. ८३७४)

तेहसीनजुबैर
(स. सं. ८४११)

श्रीनारायण
(स. सं. ८४७७)

अजय
(स. सं. ८७०२)

ओमप्रकाश
(स. सं. ८७८०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके प्रश्न

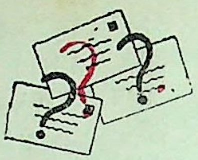

शरदचन्द्र पाण्डेय (७३१८) इन्दौर

प्रश्न—सूत कातने की हस्तकला का और तत्पश्चात् यन्त्रों का प्रारम्भ कब से हुआ ?

उत्तर—यन्त्रहीन कताई अर्थात् कताई की हस्तकला में १४वीं शताब्दी से १८वीं शताब्दी तक भारत अग्र स्थान पर रहा है। यहाँ के जुलाहों की बनायी हुई ढाका की मलमल संसार-प्रसिद्ध रही है जिसके सूत की कताई के लिए केवल बाँस की बनी तीलियों से काम लिया जाता था। १८वीं शताब्दी के मध्यकाल की औद्योगिक क्रान्ति से इस क्षेत्र में यन्त्रों का विकास होता रहा है।

विनोदकुमार मिश्र (४७०६) हरदोई

प्रश्न—क्रिकेट बैट के लिए किस पेड़ की लकड़ी काम में लायी जाती है ?

उत्तर—सेलिकेसिया (*salicacea*) श्रेणी के अन्तर्गत ३०० विभिन्न जाति के वृक्षों में से विलो (willow) वृक्ष की लकड़ी प्रयुक्त होती है। ताजा काटने के बाद इसे दो वर्ष तक तैयार होने (seasoning) के लिए रखे रहना पड़ता है। तत्पश्चात् ही काम में ली जाती है।

रामकुमार उपाध्याय (४४७४) राजगढ़

प्रश्न—अभी तक कितने तत्त्व प्राप्त किये जा सके हैं ?

उत्तर—१०३।

सुरजीतसिंह (३७१४) चित्तौड़गढ़

प्रश्न—चुम्बक से सर्वप्रथम साक्षात् किसने किया ?

उत्तर—ईसा से हजारों वर्ष पूर्व भी ग्रीक निवासियों को ज्ञात था कि लोहे का चुम्बकीय आक्साइड—मैग्नेटाइट (magnetite) सामान्य लोहे को खींचता है। ११वीं शताब्दी से चुम्बक का प्रयोग नाविकों द्वारा होने लगा था। प्राप्य उल्लेखों से ज्ञात होता है कि चीन के शेन कुवा (Shen Kua, १०३०-९३) ने ही सर्वप्रथम चुम्बक का प्रायोगिक महत्त्व दर्शाया था।

सज्जनसिंह सुराना (७६८१) उदयपुर

प्रश्न—क्या खाना खाने के पश्चात् तुरन्त स्नान करने से हानि हो सकती है ?

उत्तर—खाने की क्रिया के अन्तर्गत आन्तरिक ताप इतना बढ़ जाता है कि उस अवस्था में नहाने से बहुत बड़ी हानि हो सकती है।

राजकिशोर राजेश (६१०६) सहर्षा

प्रश्न—H_2SO_4 को SO_4H_2 क्यों नहीं लिखते ?

उत्तर—यह सूत्र है। इसका पूरा नाम Hydrogen Sulphate है।

धर्मीचन्द्र गंगवाल (७२५६) अजमेर

प्रश्न—स्टेनलेस स्टील का प्रारम्भ कैसे हुआ ?

उत्तर—इसका श्रेय इंगलैण्ड के हेरी ब्रेयरले को है। उन्होंने क्रोमियम की अधिक मात्रा युक्त एक लोहे के ढेर को कई दिन कोने में पड़े रहने पर भी जंगरहित पाया तो आश्चर्यसहित दूसरे प्रयोगस्वरूप उसी मिश्रण के एक टुकड़े से एक छुरी बनाकर खुली मिट्टी-पानी में गाड़ दी। महीने भर बाद भी वह वैसी ही चमकती हुई निकली। १९१२ की उस घटना से ही स्टेनलेस स्टील का प्रचलन बढ़ा है।

वीरेन्द्रकुमार गुप्त (६९७३) नेतरहाट

प्रश्न—Aurora Borealis क्या है ?

उत्तर—ये उत्तर ध्रुवीय क्षितिजों पर कभी-कभी दिखने वाले अत्यन्त मोहक और दुर्लभ रंगीन प्रकाशपुंज हैं। ये केवल सूर्य-कलंकों की सक्रिय अवस्था में ही देखे जा सकते हैं।

अजयकुमार सिन्हा (७७५४) राँची

प्रश्न—अधिक से अधिक कितने बड़े ओले कहाँ गिरे होने का उल्लेख प्राप्त है ?

उत्तर—सन् १८७० में, श्रीरंगपट्टम (भारत) में नन्हे हाथी जितने बड़े ओले पड़े होने तक प्रत्यक्षदर्शी के कथन का उल्लेख है।

पूरनचन्द्र जोशी (८००) सागर

प्रश्न—पोजीट्रॉन क्या है ? इसका आविष्कार किसने किया ?

उत्तर—धनावेशित इलेक्ट्रॉन है। इनकी खोज केलीफोर्निया के एण्डरसन ने १९३२ में की थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ४४

प्रथम पुरस्कार	२५ रु. की पुस्तकें
द्वितीय पुरस्कार	२० रु. की पुस्तकें
तृतीय पुरस्कार	१५ रु. की पुस्तकें

अन्तिम तिथि : ३० सितम्बर

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ५९ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्द कर इस पते पर भेज दो :

कृष्णा दीदी, संचालिका, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा

लिफाफे पर 'विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ४४ का उत्तर' लिखना आवश्यक है। उत्तर ३० सितम्बर तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुँच जाने चाहिए। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जाएगा।

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ४४ के प्रश्न

१. जाइरोस्कोप (gyroscope) का प्रयोग सर्वप्रथम किसने और कब प्रारम्भ किया ?

२. मेंढक (frog) तथा मेक (toad) में मुख्य दो अन्तर बताइए।

३. फोरेमाइट (foramite) क्या है। इसके दोनों पात्रों में कौन-कौनसे मिश्रण रहते हैं ?

४. संसार का संबसे बड़ा सिंक्रोसाइक्लोट्रॉन कब और कहाँ बनाया गया था ?

५. आकाश के तारों का माप तथा भार किस प्रकार ज्ञात किया जाता है ?

६. वानस्पतिक हाथीदाँत किस वनस्पति से और कहाँ-कहाँ प्राप्त होता है ?

७. १६ जून, १९६३ को अन्तरिक्ष में उड़ान भरने वाले सोवियत यात्री-युगल (महिला और पुरुष) के नाम बताइए। दोनों के यान कितने-कितने घण्टे उड़ान में रहे ?

८. एक आँख को जरा दबाने पर एक ही वस्तु के दो बिम्ब क्यों दिखते हैं ?

९. सागर की उत्ताल तरंगें ज्वार के समय जब किनारे से टकराती हैं तब पानी की बढ़ी हुई मात्रा साथ में लाती हैं—इस कथन के सत्य-असत्य की विवेचना कीजिए।

१०. १४४ फुट गहरे कुएँ पर से फेंके हुए एक पत्थर को पानी की सतह तक पहुँचने में कितना समय लगेगा ?

प्रतियोगिता संख्या ४२ के प्रश्नों के उत्तर

१. हमारे नेत्रपटल का शंकु-समूह (cones) केवल सूर्य के ही प्रकाश में रंगानुभूति कर पाता है। अतः चाँदनी रात अथवा अन्य मन्द प्रकाश में रंग स्पष्ट नहीं दिखते।

२. नया खोजा हुआ तत्त्व सं. १०३ है। घायोरसो (Ghiorso) तथा उसके साथियों ने १९६१ में इसकी खोज की थी।

३. पानी में घुले हुए कैल्सियम तथा मैगनीशियम के क्षारों (carbonates) के कारण।

४. इस नाम का जहाज १७९० में हालैण्ड के निकट डूब गया था। उसके अवशेषों के साथ इसे भी समुद्र-तल से प्राप्त करके लाइड्ज इंश्योरेन्स के केन्द्रीय कार्यालय में रखा गया है। आने वाले जहाज की पूर्वसूचना सुखद होने पर इसे दो बार, अन्यथा दुखद होने पर एक बार बजाया जाता है।

५. स्ट्रोबोस्कोप द्वारा।

६. British Thermal Unit के प्रथमाक्षरों से निर्मित यह ताप का वह अंक मान है जो एक पौण्ड पानी को १°C तक गर्म करने के लिए आवश्यक है।

७. अरस्तू (Aristotle); क्राइस्ट से पूर्व (B. C.) वर्ष ३८४-३२४ तक।

८. वह उसकी तीव्र संवेदक श्रवणेन्द्रिय है।

९. पोजीट्रॉन कहते हैं। इसकी खोज केलीफोर्निया के एण्डरसन ने की थी।

१०. उन्हें प्रायः ही गीले फर्श और छिछले पानी में काम करना पड़ता है। अतः ढीले पांयचों से उन्हें सुविधा रहती है। वे चाहे जैसे उन्हें ऊँचे चढ़ा लेते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खेल-खेल में शिक्षा

शिम्भूशरण (स. सं. १५०४)

शिक्षा के साथ मनोरंजन का जितना महत्त्व है, उससे अधिक महत्त्व मनोरंजन के साथ शिक्षा का है। अमरीका के शिक्षाशास्त्रियों ने इस तथ्य को भलीभाँति समझ लिया है। वे इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए विविध प्रयोगों में बहुत आगे हैं। उनके सहयोग से वहाँ की एक फर्म ने विज्ञान के सरल उपकरणोंयुक्त कुछेक ऐसी पेटियाँ तैयार की हैं जिनमें न केवल अल्पवयस्क स्कूली बच्चे, बल्कि शालाओं के अध्यापक भी गहरी दिलचस्पी ले रहे हैं। ये पेटियाँ वैज्ञानिक शिक्षा के लिए उपयोगी होने के साथ-साथ विद्यार्थी समाज में लोकप्रिय भी बहुत हैं।

वैज्ञानिक शिक्षा की प्रयोगशालोपयोगी पेटियों (laboratory chests) के नाम से फिलहाल तैयार की गयी १८ पेटियों में उदाहरणस्वरूप निम्न पाँच पेटियों का उल्लेख महत्त्वपूर्ण रहेगा।

बीजांकुरण पेटी—इसमें रखी हुई वस्तुओं के कुशल प्रयोग द्वारा बच्चे यह देख और समझ सकते हैं कि पौधों में बीजांकुरण किस प्रकार सम्पन्न होता है।

पारदर्शक मनके—इसमें वे पदार्थ रखे गये हैं जिनसे पारदर्शक मनके बड़ी सरलता से बनाये जा सकते हैं। इसमें मिश्री के क्रिस्टल बनाकर बच्चे उसकी मिठास का भी आनन्द ले सकते हैं।

विद्युतचुम्बकीय शक्ति—यह पेटी चुम्बक तथा विद्युत सिद्धान्तों के बारे में बड़ी सरलता से प्राथमिक ज्ञान देती है। इसमें लोहे की एक गरारी पर सोलेनाइड (solenoid) तार लिपटा रहता है। तारों में विद्युत प्रवाहित करने पर वह गरारी चुम्बकीय गुण प्रदर्शित करती है। इसी पेटी में टेलीग्राफी सिखाने का भी उपकरण रखा हुआ है।

सौर वर्णपट—इस पेटी की सहायता से सूर्य का वर्णपट बनाकर सूर्य-रश्मियों की संरचना तथा अन्य जानकारी प्राप्त की जा सकती है। एक सरल स्पेक्ट्रोस्कोप यन्त्र भी बनाया जा सकता है।

पदार्थ रसायन—विभिन्न सरल एवं हानिरहित रसायनों तथा अन्य उपकरणोंयुक्त इस पेटी से द्रवीय, ठोस तथा गैसीय पदार्थों की विभिन्न अवस्थाएँ तथा उनके विविध गुणों का प्राथमिक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

प्रत्येक पेटी में विषय विशेष से सम्बन्धित सरल पाठ भी रखा रहता है। उस पाठ के द्वारा विज्ञान के आधारभूत नियम, परिवर्तन तालिकाएँ, तत्त्वों के वजन, उनकी संख्या तथा अन्य अनेक विवरण दिये होते हैं। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर रेलवे

सूचना

विलम्ब-शुल्क (डेमरेज) की दरों में वृद्धि

दिनांक १-८-६३ से नीचे लिखे हुए स्टेशनों के लिए विलम्ब-शुल्क (डेमरेज) की संशोधित दरें निम्न भाँति लागू की जाएँगी :

स्टेशन	डेमरेज की दरें
दिल्ली डिवीजन	
हजरत निजामुद्दीन, सहीबाबाद, ओखला, तुगलकाबाद (तुगलकाबाद मिनरल साइडिंग सहित) तथा दिल्ली सफदरजंग	(१) माल छुड़ाने की निःशुल्क अवधि की समाप्ति के पश्चात् प्रथम २४ घण्टे तक, .०६ नये पैसे प्रति मीट्रिक टन (अथवा अंशतः); प्रति घण्टे (अथवा अंशतः) (२) उपरोक्त २४ घण्टे के अनन्तर अतिरिक्त २४ घण्टे तक, ०.१२ नये पैसे प्रति मीट्रिक टन (अथवा अंशतः); प्रति घण्टे (अथवा अंशतः) (३) उपरोक्त द्वितीय २४ घण्टे की अवधि के पश्चात प्रति अतिरिक्त २४ घण्टे के लिए, ०.३० नये पैसे प्रति मीट्रिक टन (अथवा अंशतः); प्रति घण्टे (अथवा अंशतः)
फीरोजपुर डिवीजन	
अमृतसर, छोहारटा, भगतानवाला, जलंधर सिटी, पठानकोट, फीरोजपुर कैन्ट, लुधियाना तथा वरका ...	उपरोक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुरादाबाद डिवीजन

रामपुर, हापुड़, मुरादाबाद, सीतापुर सिटी, शाहजहाँपुर, बरेली, हरदोई, कोटद्वारा, देहरादून, हरद्वार, नजीबाबाद, चन्दौसी, टामसनगंज साइडिंग, रुड़की, अमरोहा तथा हरदुआगंज ...	दिल्ली डिवीजन के समान

लखनऊ डिवीजन

बाराबंकी, फैजाबाद, अकबरपुर, शिवपुर, जौनपुर, वाराणसी, काशी, भदोही, प्रतापगढ़, प्रयाग, फाफामऊ, रायबरेली, उन्नाव तथा लखनऊ ...	उपरोक्त

इलाहाबाद डिवीजन

कानपुर सेन्ट्रल गुड्जशेड, फीरोजाबाद, इलाहाबाद, इटावा, अलीगढ़, हाथरस किला, शिकोहाबाद तथा राबर्ट् सगंज ...	उपरोक्त

कानपुर सेन्ट्रल गुड्जशेड पर टैंक-वैगनों के लिए डेमरेज की दरें निम्न प्रकार **ली जाएँगी :**

माल छुड़ाने की निःशुल्क-अवधि की समाप्ति के पश्चात प्रथम २४ घण्टे तक, ०.१० नये पैसे प्रति मीट्रिक टन (अथवा अंशतः), प्रति घण्टे (अथवा अंशतः)

उपरोक्त अवधि के पश्चात द्वितीय २४ घण्टे के लिए ०.१५ नये पैसे प्रति मीट्रिक टन (अथवा अंशतः); प्रति घण्टे (अथवा अंशतः)

उपरोक्त द्वितीय २४ घण्टे के पश्चात प्रति २४ घण्टे के लिए ०.३० नये पैसे प्रति मीट्रिक टन (अथवा अंशतः); प्रति घण्टे (अथवा अंशतः)

उपरोक्त स्टेशनों के अतिरिक्त अन्य समस्त स्टेशनों के लिए डेमरेज की **वर्तमान दरें ही चालू रहेंगी।**

जगदीश मेहरा द्वारा दुर्गा प्रिंटिंग वर्क्स, आगरा में मुद्रित एवं श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा के लिए प्रकाशित
[मुखपृष्ठ ब्रजवासी फाइन आर्ट प्रेस, ... मथुरा में मुद्रित]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ENGLISH WORKBOOK

- A Modern Course for Writing as well as Reading through the medium of Hindi.
- The Course provides exercises in spelling, punctuation, very simple grammar, sentence-structure, picture-composition, story-writing, cross-word puzzles, letter-writing and comprehension.
- The exercises are fresh and original, varied and interesting, and are carefully *graded.*
- An interesting technique is used to teach the young pupils how to write sentences correctly. They learn by doing, and by doing *correctly.*
- Exercises are so arranged that even slow children are sure to make *rapid progress.*
- Illustrations are given to attract the child's attention and to awaken his interest in the subject.
- The series is based upon a limited vocabulary of 1200 words.
- The workbooks are graded and are suitable for use in middle and high schools.

Book I........Price : 80 nP.
Book II........Price : Re.1·00
Book III........Price : Re.1·20

For further enquiries please write to :

SRI RAM MEHRA & Co.
Educational Publishers, AGRA

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

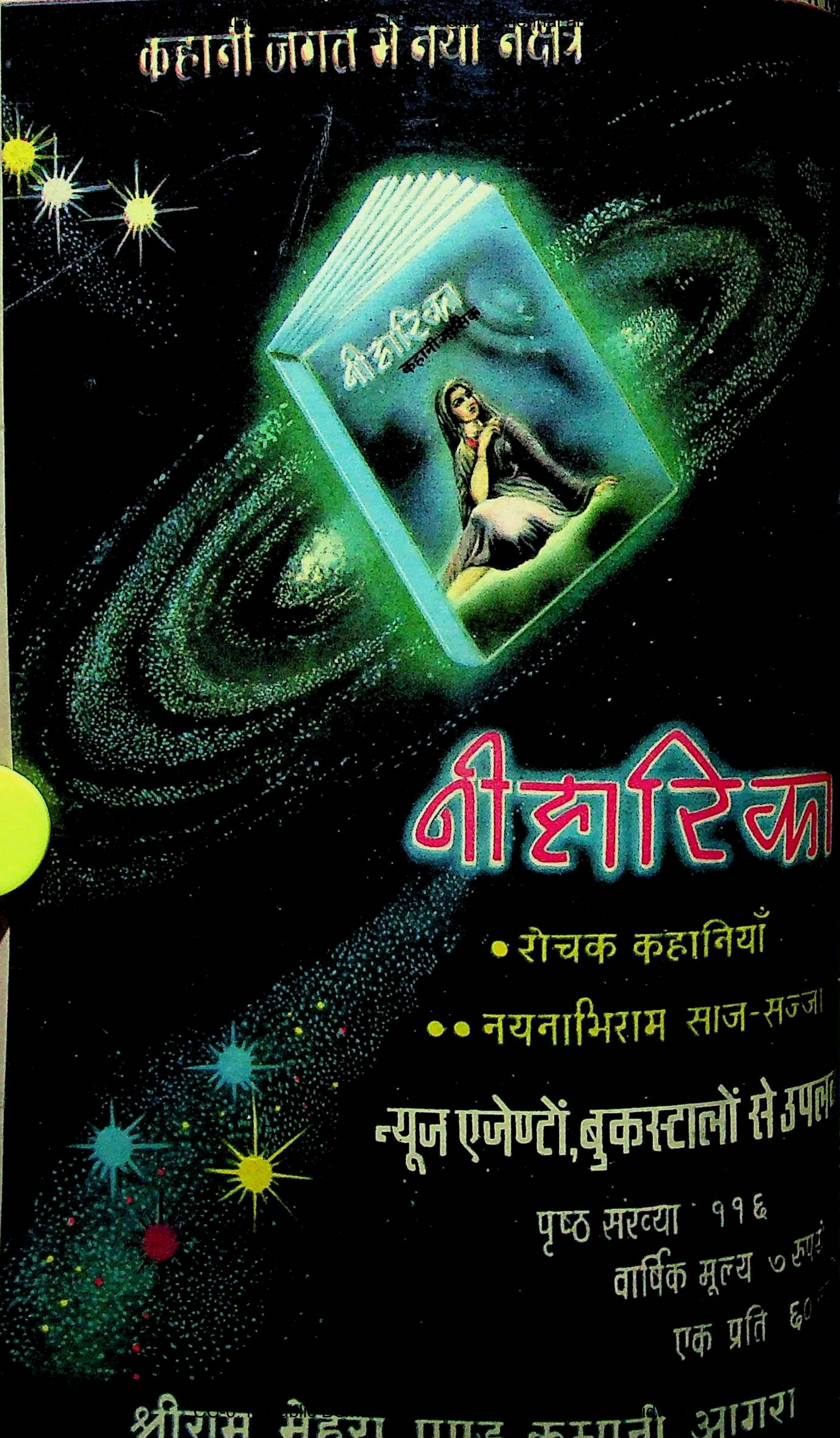
कहानी जगत में नया नक्षत्र
नीहारिका
नीहारिका
कहानी विशेषांक
• रोचक कहानियाँ
•• नयनाभिराम साज-सज्जा
न्यूज एजेण्टों, बुकस्टालों से
पृष्ठ संख्या ११६
वार्षिक मूल्य ७
एक प्रति ६०
श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा